लहर लौट गई

लहर लौट गई

कमलेश्वर

एक जानकारी :

इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्ययन करते समय से ही मेरा संबंध रेडियो से जुड़ गया था। रेडियो के लिए लिखना और प्रसारण करना — यह एक नए माध्यम की खोज थी, जो हमारे विचारों और रचनाओं को एक बहुत बड़े वर्ग तक पहुंचाता है। शुरू-शुरू के ये वर्ष बहुत महत्वपूर्ण थे—क्योंकि एक नए माध्यम के लिए शब्दों को चुनना और ढालना एक कठिन काम था।

यह समय 1954 से 1959 तक का है—

सांस्कृतिक और साहित्यिक दृष्टि से यह दौर रेडियो का रचनात्मक दौर रहा है—विशेष रूप से हिन्दी और हिन्दी साहित्य के लिए। रेडियो के इस नवोन्मेष का श्रेय श्री जगदीश चन्द्र माथुर को है, जिन्होंने नए और पुराने साहित्य के सभी लेखकों-कवियों, विचारकों का सम्बन्ध रेडियो से जोड़ दिया और इस माध्यम को एक स्तर और गरिमा दी।

एक तरफ सुमित्रानंदन पंत, भगवतीचरण वर्मा, पं० नरेन्द्र शर्मा, गिरिजा कुमार माथुर, विष्णु प्रभाकर, इलाचन्द्र जोशी, आरसीप्रसाद सिंह जैसे प्रख्यात और दिग्गज लेखक रेडियो से सम्बद्ध हुए, तो दूसरी ओर सत्येंद्र शरत, सुमित्रा कुमारी सिन्हा, गोपाल कृष्ण कौल, चिरंजीत, मार्कण्डेय, दुष्यन्त कुमार, अजित कुमार, ओंकारनाथ श्रीवास्तव, मधुकर गंगाधर, फणीश्वरनाथ रेणु, शांति मेहरोत्रा, केशव चन्द्र वर्मा, मुद्राराक्षस जैसे नए और संघर्षवादी लेखक भी रेडियो से जुड़े।

मेरा संबंध भी इन्ही दिनों रेडियो से जुड़ा और अन्ततः सन् 1959

में मुझे भारतीय दूरदर्शन के लिए अनुबंधित करके दिल्ली भेज दिया गया।

यह वह दौर था, जब किसी भी भारतीय भाषा का स्वनामधन्य लेखक रेडियो से दूर नही था। हिन्दी की सभी पीढ़ियों के लेखकों का प्रगाढ़ संबंध इस माध्यम से था।

साथ ही रेडियो के छोटे-बडे, लगभग सभी अधिकारी ऐसे थे, जिनके संस्कार साहित्यिक थे और वे अपने-अपने रूप में साहित्यिक प्रतिभा के मालिक और सांस्कृतिक रूप से जागरूक और साहसी व्यक्ति थे! उस समय भारतीय सिविल सर्विस (I A.S.) मे चुना जाना और रेडियो मे आना लगभग समान रूप से महत्वपूर्ण माना जाता था, बल्कि रेडियो में गए व्यक्ति को सांस्कृतिक रूप से कुछ अधिक गंभीर और संस्कारशील समझा जाता था।

इसी दौर में रेडियो तथा बाद मे, सन् 59 में मेरा सम्बन्ध दूरदर्शन से हुआ। रेडियो-लेखन ने मुझे शब्दों की महत्ता का रास्ता दिखाया— भावों और विचारों को सरल रूप से रखने का ढब सिखाया और एक लेखक के रूप मे अपने साहित्यिक उत्तरदायित्व का एहसास भी कराया— कि हम क्यो और किसके लिए लिखते हैं।

मेरे ख्याल से एक विकासशील देश के लेखक की जिम्मेदारियां दोहरी होती हैं—एक तरफ जहां वह अपने सौंदर्य, सत्य और संघर्ष को वाणी देता है, वही दूसरी ओर वह अपने व्यापक अशिक्षित जन समुदाय तक पहुंचने के लिए एक दूसरे तरह की रचना भी करता है, जो चाहे अपने मूल्यों मे कम रचनात्मक हो, पर जो अपने सामाजिक उत्तरदायित्व की आंशिक पूर्ति भी करती है।

रेडियो-लेखन की अपनी शर्तें होती हैं और उसकी परिसीमाएं भी, लगभग वैसी ही, जैसी किसी पौधे को लगाने पर एक दायरे में फलने-फूलने की उसे नैसर्गिक छूट होती है।

रेडियो ने अपने कला-रूपों का बहुत विकास किया है। मैंने लगभग 500 स्क्रिप्ट्स रेडियो के लिए लिखी हैं—जिनमें से केवल 10 मैं इस संग्रह में दे रहा हूं, जो इस माध्यम के अलग-अलग कलारूपों का परिचय

देती हैं।

लेखन के अलावा रेडियो से मेरा संबंध एक ब्राडकास्टर की तरह भी रहा है, जो बाद में ज्यादा प्रगाढ़ हो गया। शुरू-शुरू में मैं इलाहाबाद आकाशवाणी से सुश्री उमा भटनागर के साथ पत्रों के उत्तर दिया करता था। इस अनुभव ने मेरे उच्चारण को संभाला और वाक्य विन्यास तथा शब्दों के तात्कालिक अचूक चयन का अभ्यास कराया। इस अनुभव ने (तथा इसी संग्रह में संकलित रेडियो डाकूमेंटरी—'साहसी यात्री : वास्कोडिगामा' जैसे लेखन ने) मुझे कमेंट्रीज और रनिंग-कमेंट्रीज दे सकने के योग्य बनाया। फिर चाहे वह हरिद्वार का कुम्भ मेला हो या इलाहाबाद का अर्ध-कुम्भ, या 15 अगस्त को लाल किले का प्राचीर या गणतंत्र दिवस पर दिल्ली का राजपथ—सबके लिए रेडियो-लेखन ने साहस, समझदारी और भाषा की रवानी दी।

इसी अनुभव ने मेरा साथ दूरदर्शन में भी दिया, पर वह एक अलग कहानी है।

इस संकलन में विशुद्ध साहित्यिक रेडियो-रचनाएं भी हैं, रूपान्तर भी और मौलिक प्रहसन, झलकियां, धारावाही फीचर्स और रेडियो-नाटक भी। इन विविध कला रूपों के साथ मैंने छोटे-छोटे नोट्स भी लगा दिए हैं, ताकि रुचि रखने वाले पाठक इनके लेखन की साहित्यिक और सामाजिक शर्तों तथा सीमाओं को आत्मसात कर सकें।

29.5.84

28, पराग अपार्टमेंट्स, —कमलेश्वर

जयप्रकाश रोड, वरसोवा, बम्बई-400061

क्रम

मौलिक रेडियो नाटक

लहर लौट गई

[यह एक स्वतंत्र और मौलिक रेडियो नाटक है। यानी इसकी परिकल्पना ही रेडियो के लिए की गई है। यह सन् 58 मे प्रसारित हुआ और उस समय की एक घरेलू और नितांत व्यक्तिगत समस्या को यह नाटक प्रस्तुत करता है। यानी ये नाटक ध्वनि प्रभाव और संवादों का सहारा लेकर एक अदृश्य दुनिया को साकार करता है, जिसकी कोई जानकारी श्रोता को नहीं होती – पर धीरे-धीरे वह विषय-वस्तु और कथ्य से परिचित होता जाता है।

यह मौलिक लेखन का एक उदाहरण है—जिसे मूलतः रेडियो की देन कहा जा सकता है और जिसे हमारे तमाम प्रख्यात लेखकों ने एक निश्चित रूप देकर एक सशक्त विधा के रूप में स्थापित किया है।]

[पृष्ठभूमि में धीमे-धीमे अंग्रेज़ी बैण्ड की ध्वनि उभरती है। घर की शादी समाप्त हो चुकी है और लड़का बहू को लेकर आया है। बाजे के साथ-साथ स्त्रियों के मंगल-गीत की सम्मिलित ध्वनि सुनाई पड़ती रहती है। कई तरह के मंगलमय ध्वनि संकेतों के बीच बासुरी की बड़ी दर्द भरी चीख सी सुनाई पड़ती है। इतने कोलाहल और हंसी-खुशी के बीच बासुरी की आवाज एक एकाकी आत्मा की तरह छटपटाती हुई घूमती है। पूरा वातावरण एकदम उदास हो जाता है एक स्त्री की बहुत गहरी उसांस सुनाई पड़ती है।]

बड़ी भाभी : (सुनकर मज़ाक में) क्या हुआ रजनी बीबी? ठंडी सांसें क्यों ले रही हो! इतने भाई तो हैं, मन नहीं भरता! (दो-तीन औरतें खिलखिलाकर हंस देती हैं।)

रजनी : (मज़ाक को पीती हुई दूसरी ओर मोड़ देती है) अरे भाभी, भाइयों को तुम लोगों से फुर्सत मिले, तब न! (और बड़ी फीकी सी खोखली हंसी हस देती है)

बड़ी भाभी : अच्छा रजनी बीबी, जरा पूनम के कपड़े बदलवा दीजिए···मेरी अच्छी रजनी···(पूनम से) जा पूनम जा, बुआ तुम्हें सजा देगी···

(पीछे से छोटी भाभी आती है)

छोटी भाभी : अरे जीजी तुम यहा खडी हो! जरा मेरी साड़ी तह करवा दो···ये बार-बार सरक जाती है।

बड़ी भाभी : अरे शान्ता तुम तो जार्जट वाली साड़ी पहनने जा रही थीं···यह क्या गंदी सी पहन ली···

छो.भा.शान्ता : जार्जट वाली साड़ी में तमाम सलवटें पड़ गई है जीजी···

बड़ी भाभी : तो प्रैस कर लेती···

छो. भाभी : बच्चे करने दें तब तो···

ब. भाभी : रजनी बीबी से विनती कर···एक मिनट में प्रैस हो जाएगी···सलीके और काम में तू हमारी रजनी बीबी को नहीं पा सकती···मना वो करेंगी नहीं···

(पीछे से आवाज़ आती है)

मां : अरे बड़ी बहू···छोटी बहू···तुम सब लोग कहां हो ! चलो भाई···परछन की बेला निकली जा रही है···

दोनों भाभियां : राम रे ! अम्मा जी हैं···

ब. भाभी : जल्दी कर शांता···चल···चल। साड़ी रजनी को दे दे···

(मां नज़दीक आ जाती हैं···)

मां : अरे रजनी ! तू यहां खड़ी है। अभी तैयार भी नहीं हुई···मैं समझी थी, तू बहू के पास होगी···

रजनी : नहीं मां, मैं यहीं थी···

मां : कैसी लड़की है तू···तेरा भइया भाभी लेकर आया है, द्वार पर खड़ा है और तू···बहू क्या वहां अकेली बैठी है ? कोई उसे कार से उतारने गया या नहीं···

रजनी : और सब गईं हैं···

मां : (भरे स्वर से) तुझे क्या हो गया रजनी बेटा ? जा जल्दी तैयार हो जा···

रजनी : अभी पूनम को तैयार करना है। और शान्ता भाभी की साड़ी प्रैस करनी है···

मां : (डांटकर) यह सब फिर होता रहेगा···जा, तू तैयार हो···जा···

रजनी : हो जाऊंगी मां ! तब तक और बहनें···

मां : (बड़े उदास तरीके से झिड़कते हुए) पेट की जाई तो

एक ही है…चल…अभी से बुढ़िया हो गई…ला पूनम को मुझे दे…आजा पूनम…मेरे साथ आजा…
(पृष्ठभूमि मे अंग्रेज़ी बैण्ड और मंगलगीतो का शोर सुनाई पडता रहता है…एक क्षण तक घर की हलचल का आभास : द्वार पर घर की सभी स्त्रियां खड़ी हैं, परछन के गीत गाए जा रहे हैं, बच्चों की चीखें और बातें सुनाई पड रही हैं)

मां : बहू रानी और मदन को द्वार पर ले जाओ…गांठ बांधकर लाना लड़कियों…
(फिर शोर 'अरे मूसर कहां है !' 'और आरती का थाल !' खिलखिलाहट…'द्वार के कलशों के दिये जलाओ…' 'ए महरी ! तू उधर क्या खडी है।')

मां : (चीखकर) रजनी कहां है ! आरती का थाल अभी तक नही आया…रजनी को बुलाओ…

एक स्वर : (आवाज़ लगाता है) रजनी…अ…अ…अ ! चलो भाई…

रजनी : आ गई भाई…

मां : (झिड़कते हुए) क्या करने लगी थी रजनी तू ? ला थाल दे ! अरे दिये तो जला जल्दी से…
(मदन और उसकी पत्नी द्वार पर आ गई है…पीछे से एक स्वर 'संभल कर मदन ! जरा भाभियो को देखकर…')

मां : जल्दी-जल्दी परछन करो…कब से बहू विचारी खड़ी है !
[हंसी, कहकहों और मंगलगीतों की आवाज धीमी पडती है…तभी रजनी के पिता उसकी मा को एक तरफ ले जाते हैं…]

पिता जी : रजनी की मां… (कुछ धीमे स्वर में) रजनी की मां… सुनो तो…

(शोर पीछे छूट जाता है···)

मां : कुछ तो ख्याल किया करो रजनी के बाबूजी···इतनी औरतें-बहुएं खड़ी थीं और सबके बीच से तुम हाथ पकड़ कर खींच लाए···

पिता जी : सुनो भी···

मां : सुनाओ क्या है ? (खीझती हुई)

पिता जी : यहा नहीं, कमरे मे चलो भीतर···

(कमरे का आभास कोलाहल एकदम समाप्त हो जाता है, कमरे में खामोशी छाई है।)

पिता जी : सब बिगड़ गया···

मां : (खीझकर) आपको हुआ क्या है। कुछ बताओगे कि बस यही···

पिता जी : (खीझकर) अरे रजनी की मां, सब बिगड़ गया···जो कुछ सोचा था सब पर पानी फिर गया···

मां : (चौंककर) क्या ?

पिता जी : हां ! समझ मे नहीं आता···रजनी के भाग्य में न जाने क्या बदा है···मदन का ब्याह भी कर लिया···

मां : क्यो मदन की ससुरालवालों ने कुछ भी नहीं दिया क्या ?

पिता जी : दिया तो सब कुछ, पर वह हमारे किस मतलब का !

मां : मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि साफ-साफ तै कर लो···मैंने इसीलिए तुम्हें इतना कोंचा था पर तुम तो···

पिता जी : (चिढ़कर) सुनो भी, मैंने मदन के ससुर से टीके के वक्त ही कह दिया था कि हमें चीजें नहीं, रुपया चाहिए···शादी में जो भी चीजें देने का आपका इरादा हो, उनकी बजाय हमें रुपया दे दीजिए···

मां : चीजें भी तो नहीं दिखाई पड़तीं। ठूंठ ऐसी बहू आई है···आया क्या है ससुराल से···(चीखकर) चीजें भी

नही और रुपया भी नही'''तुम कैसे वहां से खामोश चले आए'''

पिता जी : तुम समझीं नही'''

मां : मैं सब समझती हूं। मैं पहले ही जानती थी, पर तुमने इन लोगों का विश्वास किया'''अब कौन सा ऐसा जरिया है जिससे रुपया मिलेंगे और रजनी के हाथ पीले होंगे'''

पिता जी : मैं खुद मदन की शादी के रुपयों की आस लगाए था'''

मां : (रूआंसी होकर) अब कैसे क्या होगा'''(आह भर कर) न जाने इस रजनी के भाग्य मे क्या बदा है, हे परमेश्वर'''पर मुझे तो तुम्हारी अक्ल पर तरस आता है। अगर उन्हे कुछ देना नहीं था तो तुम्हें लड़की छोड़ आनी थी, अक्ल ठिकाने आ जाती। लड़के की तीन सौ पचास शादियां हो जाती'''यह सब तुम्हारी गलती है।

पिता जी : अरे भाई रुपया तो उन्होने पूरा दिया हैं'''

मां : तब काहे को जान सांसत में डाले थे, हटो मैं जाऊं'''

पिता जी : यही तुम नही समझती'''रुपया उन्होने दिया है पर वह सब बहू के नाम करके दिया है'''

मां : (त्योरी चढ़ाकर) क्या ?

पिता जी : हां ! मदन के ससुर ने ब्याह भर मे एक रूमाल तक नही दिया, जितना रुपया उन्हें खर्च करना था, वह सब उन्होने बैंक मे बहू के नाम जमा करवा दिया है।

मां : ये आजकल की छोकरियां बड़ी चलती पुर्जा हैं, यह सब इस नई बहू की कारस्तानी है'''

पिता जी : (बात काट कर) अपने लड़कों को नही देखती ! किशन की शादी की थी, तब भी यही सोचा था, इसीलिए वह घर से अलग हो गया'''किशन उससे भी चार पैर आगे निकला'''कितनी हंसाई होती है मेरी कि लड़का ससुराल मे रहे'''ऐसी क्या कमी है घर पर'''

मां : किशन की बात तुम मेरे सामने मत किया करो···वह तो जोरू का गुलाम है, जिधर उसकी बीवी लगाम खींचती है, उधर जाता है···मैंने तो मन को समझा लिया है कि वह मेरी कोख से जनमा ही नहीं··· (कहते-कहते रुंआसी हो आती है) लाख ससुराल वाले बरगलाते पर किशन कैसा था, जो मां-बाप, भाई-बहनों का शील प्यार छोड़कर चला गया···

पिता जी : पर अब होगा क्या ? मेरी अक्ल काम नहीं करती···

मां : (गहरी सांस भरकर) होगा क्या ? न जाने परमात्मा ने क्या लिख रखा है इस रजनी के माथे पर···जवान भाइयों वाली बहन होकर भी···

पिता जी : मैंने पहले ही कहा था, मैं कोशिश कर लेता तो अभी रिटायर नहीं होता नौकरी के दो साल और बढ़ सकते थे···

मां : सैंतीस बरस की नौकरी में चार आने जोड़ सकने की नौबत नहीं आई···दो बरस नौकरी और कर लेते तो कारूं का खजाना नहीं ले आते !

(पीछे कुछ खटकता है)

पिता जी : कोई आया है शायद···कौन रजनी···रजनी···

(पृष्ठभूमि में हल्की-हल्की सिसकियों की आवाज सुनाई पड़ती है और कुछ सरसराहट होती है)

मां : रजनी ही है···यहां आ रजनी ··

(रजनी की सिसकियां निकट आ जाती हैं)

मां : क्या हुआ बेटी ! मुझसे तेरा रोना नहीं देखा जाता···

रजनी : (सिसकियों के साथ) मेरा भाग्य ही खराब है मां, तुम लोग क्या कर सकते हो···पर मुझसे बाबू जी और तुम्हारी परेशानी नहीं देखी जाती···मां मेरी शादी की बात को लेकर तुम परेशान मत हुआ करो···

मां : (रुआंसी होकर) कैसी बात करती है रजनी !

रजनी : (रोकर) मां, जब मेरी किस्मत ही खराब है तब तुम लोगों को दुख काहे को दूं···बोलो मां !

पिता जी : तुझे इस सब से क्या रजनी ! यह हमारे सोचने की बात है···मैं अभी जिन्दा हूं बेटा ! धरती···फाड़ के लाऊंगा सब-कुछ तेरे लिए···

(रजनी की सिसकियां सुनाई पड़ती रहती है पीछे से एक आवाज आती है)

एक स्वर : बाबू जी···बाबू जी···बाजे वाले रुपये मांग रहे हैं···

पिता जी : आया···एक मिनट···जाओ रजनी तुम बहू के पास बैठो···

(अन्तराल)

(वर्षा का आभास। साथ में कभी-कभी हवा की सांय-सांय भी सुनाई पड़ जाती है, जब केवल पानी बरसने की आवाज आती है तब तक एक दो बहुत गहरी सांसें सुनाई पड़ जाती हैं)

चन्दा : इतनी उदास रहेगी रजनी तो कैसे जिएगी···क्या नही है तेरे घर में···इतने अच्छे भाई भाभियां···

रजनी : (बहुत गहरी सांस लेकर) तू क्या जाने चन्दा ? न जाने क्या हो गया है मुझे···समझ में ही नही आता··· क्या बताऊं···

चन्दा : हमे नही बताएगी रजनी···अपनी दोस्त को···

रजनी : तू मुझे इतना प्यार काहे को करती है चन्दा ! एक दिन बहुत रोना पड़ेगा।

चन्दा : क्यों ! किसका घर आबाद कर रही है ? बताएगी नहीं···

रजनी : आबाद ! अपनी बरबादी ही कौन कम है चन्दा···अरे चन्दा···मैं लड़की न होती, जानवर हो जाती···कंकड़ पत्थर हो जाती···

चन्दा : (चिन्ता से) तुझे क्या हो रहा है रजनी !

रजनी : खूब रोने को मन करता है चन्दा···इतना रोऊं, इतना रोऊं कि दुनिया इन आंसुओं में डूब जाए···

(बारिश की एक तेज बौछार पड़ती है)

चन्दा : बादलों को देख रजनी···अरे तेरी आंखों में आंसू।

(हल्की सी सिसकी सुनाई पड़ती है।)

रजनी : अरे चन्दा ! अब ये आंखें बरसती ही रहेंगी···मेरे भाग्य में यही है···बड़ी अभागिन हूं मैं।

चन्दा : ऐसी बुरी बातें क्यों निकालती है मुह से···

रजनी : और अपने को किस नाम से पुकारूं···इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या होगा चन्दा···और क्या होगा···कितना अंधेरा लगता है चारो तरफ···चन्दा ! कभी-कभी तो लगता है···अंधेरी सुरंग मे ये जिन्दगी यू ही यूं ही भटक-भटक कर दम तोड़ देगी···चन्दा ! इतनी वीरानी···इतना सूनापन कि कहीं से आवाज़ तक नहीं आती···मैं तो ऐसा रेगिस्तान हूं चन्दा जिसमें एक लहर तक नही आई, आ ही नही सकती···

चन्दा : तुझे क्या होता जा रहा है रजनी ? कैसी बहकी-बहकी बातें कर रही है···

रजनी : बहक नहीं, यह सच्चाई है मेरी चन्दो ! मैं प्यासी ही मर जाऊंगी···(आवेश में) यह प्यास मुझे मार डालेगी ! तू ही बता···कौन है ऐसा जिसने मुझे प्यार किया हो···जिसने आंखों में बादल भर कर मेरी ओर देखा हो···जिसने मेरे लिए सोचा हो···

चन्दा : तूने समझना ही नहीं चाहा तो कोई क्या कर लेता ?

रजनी : कैसी बातें करती है तू ? मैं प्यासी घूमती रही, वह दिन याद आते हैं चन्दा···बीते हुए दिन···दस बरस हुए चन्दा···तेरा भाई सुरेन्द्र आया था···

(पांच)

(फ्लैश-बैक—बारिश की आवाज समाप्त होती है···आज से दस साल पहले सिलाई मशीन चलने की आवाज आ रही है···)

रजनी : देख लो मां, यह सुरेन्द्र नही मानता···

मां : क्या बात है रजनी, इतनी सयानी हो गई फिर भी तेरी लड़ने की आदत नहीं गई···

रजनी : (किशोरी की तरह ठुनकती हुई) हूं···हूं···ये सुरेन्द्र मेरी ड्राइंग कापी खराब करता है···मां ! (पुकारती सी है) देख लो मां···मैंने राजकुमारी की तस्वीर बनाई है ये उसके मूंछें बनाता है···

मां : बेकार की बात नहीं करते (मशीन रोककर) सुरेन्द्र तुझे इतना प्यार करता है और तू लड़ती है उसी से···

रजनी : (पुकार कर) मा···यह नहीं मानता···

मां : मुझे काम करने दे रजनी, बड़ी सिलाई पड़ी हुई है···

(भीतर से रजनी और सुरेन्द्र के लड़ने की आवाज आती है)

सुरेन्द्र : तू मेरी पतंग की डोरी सुलझा दे, तो जा, मूंछ नहीं बनाऊगा···

रजनी : नहीं सुलझाती-जा (झगड़ने के अंदाज मे)

सुरेन्द्र : तो ले···यह बनी एक तरफ की मूछ···

रजनी : मां देखो, मेरी राजकुमारी की तस्वीर खराब कर दी···

सुरेन्द्र : बड़ी सुन्दर थी न ! घोड़े जैसा मुंह ! गधे जैसे कान ! ···तुझ से सचमुच यह तस्वीर बहुत मिलती है !

रजनी : मेरी शक्ल तो रानी जैसी है···तू देख जाके शीशे में अपना मुंह ! (एक क्षण रुककर) अरे क्या हुआ सुरेंद्र ···नाराज हो गया···बता न···मैं···मैं तो ऐसे ही

शिकायत कर रही थी···

सुरेन्द्र : मैं घर जा रहा हूं···

रजनी : नाराज़ हो गए मुझसे···(मनाने के लहजे मे) मैंने तुम्हारे लिए रूमाल काढ़ा है···लोगे···

सुरेन्द्र : नही !

रजनी : अरे, तुम तो मेरी तरफ देखते तक नहीं···अच्छा यह बताओ, तीन दिन तक आए क्यों नही थे ?

सुरेन्द्र : नही आया, मेरा मन !

रजनी : मैं अच्छी नही लगती···

सुरेन्द्र : इससे क्या मतलब ?

रजनी : (एकदम भावनात्मक परिवर्तन के साथ) मैं सुदर नहीं हूं···सुरेन्द्र···तुम्हे अच्छी नहीं लगती···बताओ सुरेन्द्र ···(आवाज भारी हो जाती है)

सुरेन्द्र : यह किसने कहा ?

रजनी : मा बराबर यही टोकती हैं···दिन में दस बार कहती हैं ···रूप-रंग नही है तो गुन ही संभाल ले···रूप रग··· रूप रग कैसे ले आऊ···कहां से लाऊं···तुम्हीं बताओ···

सुरेन्द्र : तुझे वहम हो गया है···मां तो ऐसे ही मजाक में कहती होगी रजनी !

रजनी : (खिलकर) सच ! तुम्हें मैं अच्छी लगती हूं···सच-सच बताना सुरेन्द्र···

सुरेन्द्र : (भावाकुल होकर) बहुत रजनी···बहुत अच्छी लगती हो तुम···

रजनी : मुझे कभी रुलाना मत सुरेन्द्र···मैं तुम्हारे लिए ही जी लूंगी···कल आओगे ?

सुरेन्द्र : हां, लेकिन तुम्हें तो काम से ही फुर्सत नहीं मिलती··· मैं आकर क्या करूंगा ?

रजनी : (गहरी सांस लेकर) मैं सब निपटा लूंगी तब तक···

आना जरूर…कल एक बडी अच्छी बात सुनाऊंगी…

सुरेन्द्र : क्या ? अभी बताओ न…

रजनी : (ठुनककर) अभी नही…

सुरेन्द्र : बता न रजनी…

रजनी : अच्छा बताऊं ? पर हाय राम कैसे बताऊं ? मुझसे नही कही जाती…

सुरेन्द्र : जल्दी बता…नही तो कोई आ जाएगा…

रजनी : उं हूं…मैं बता ही नही पाती…

सुरेन्द्र : फिर मैं नहीं बोलता…

रजनी : अच्छा बताती हूं…कल…कल…कल जब मां अपने कपड़े रख रही थी…सन्दूक में…(एकदम) मैं नही बताती (शर्मा जाती है)

सुरेन्द्र : अच्छा तो मैं जाता हूं…कल नही आऊगा !

रजनी : बता तो रही हूं ! कल जब मां अपने सन्दूक मे कपड़े रख रही थी तब मुझ से पूछती थी… मुझसे उन्होंने पूछा था…कि…कि…सुरेन्द्र तुम्हे कैसा लगता है…

सुरेन्द्र : किसे, तुझे !

रजनी : हां मुझे, और किसके लिए पूछती ?

सुरेन्द्र : तब तूने क्या कहा…

रजनी (एकदम शर्मा कर) मैं नही जानती…

सुरेन्द्र : बता न…

रजनी : मुझे याद नहीं…अच्छा मैं जा रही हूं…

(रजनी के भागने का स्वर)

सुरेन्द्र : (दबी हुई आवाज़ में) रजनी…सुन तो…अरे रुक तो रजनी…

(फेड आउट)

(क्षणिक अन्तराल)

(बारिश का शोर। रजनी और चन्दा की गहरी-गहरी सांसें सुनाई पड़ रही हैं। फ्लैश बैक समाप्त)

चन्दा : फिर क्या हुआ रजनी ?

रजनी : (बहुत गहरी सांस लेकर) फिर वही हुआ चन्दा जो भयंकर बरसात के बाद होता है ! सब तहस-नहस हो गया…बालू के घरौंदे पानी में पिघल कर बह गए…और मैं जनम-जनम के लिए प्यासी रह गई…

(बारिश का भयंकर झोंका आता है भीषण सांय-सांय के बीच रजनी का स्वर सुनाई पड़ता है।)

रजनी : चन्दा ! फिर एक दिन…मां ने मेरी शादी की बात सुरेन्द्र से की थी…मैं दरवाज़े की आड़ में खड़ी सब सुन रही थी…न जाने सुरेन्द्र कैसे कह पाया था…मुझे वह सब याद आता है चंदा…लेकिन अब सुरेंद्र की बातें याद करने का क्या फायदा…

(बारिश का शोर…)

रजनी : तबसे यह बारिश लगातार हो रही है चन्दा ! कभी रुकती ही नहीं… (सिसकती है)

चन्दा : अब तो तेरे छोटे भाई की भी शादी हो गई…तू अब शादी कर ही ले…ऐसे आखिर कब तक चलेगा…

रजनी : यह क्या मेरे हाथ की बात है चन्दा ? पिताजी ने सारी पूंजी भाइयों को पढ़ाने-लिखाने में खर्च कर दी…अब उनके पास कानी कौड़ी तक नहीं…

चन्दा : क्यों, और जो इतने भाइयों की शादियां हुईं, उससे एक तेरी शादी नहीं हो सकती…

रजनी : कैसी बातें करती है चन्दा ! भाइयों को देखा तो है तूने…बड़े भइया शादी के दसवें रोज़ अपना सब कुछ लेकर अलग हो गए…मंझले भइया घर जमाई बनकर

अपनी ससुराल में रहने लगे···और यह मदन सुना है इसकी बीवी सब अपने नाम चढ़वा कर बैंक बैलेंस लाई है···पिता जी को क्या मिला ? जो कुछ था, वह भी गंवा बैठे···पिता जी यही जुआ खेलते रहे···

चन्दा : सच ! हाय राम···बाप की मजबूरी भी कितनी बड़ी मजबूरी होती है···

रजनी : इसीलिए मैंने तो अपने अरमान एक गठरी में बांधकर अलग रख दिए···पर चन्दा न जाने क्यों अभी मन कभी-कभी पंख फैलाता है···चाहती हूं यह पंख भी कतर दू पर क्या करूं···कुछ भी अपने वश का नहीं रहा ! न खामोश बैठा जाता है न चीखा ही जाता है चन्दा ! न जिया जाता है न मरा जाता है···कभी-कभी मन सपनों के देश में उड़ जाता है, और जब वहां से अचानक पथरीली धरती पर आ गिरता है तो दो-चार दिनों के लिए एकदम मर जाती हूं···फिर न जाने क्या होता है···न जाने कहां से घुटी-घुटी-सी अकेली सांस आ जाती है··· (लगभग चीखकर) चन्दा ! मन बहुत घबराता है···(रो पड़ती है)

[एक बौछार पड़ती है]

चन्दा : चुप हो जा रजनी !···चुप हो जा···

रजनी : ऐसे ही रोते-रोते चुप हो जाऊंगी चन्दा···अभी रो रही हू, अभी हस पड़ूंगी···मेरा क्या है ?

(कुछ क्षणों तक बड़ी वीरान-सी खामोशी छाई रहती है)

रजनी : अच्छा, चन्दा अब चलूं। घर से मेहमान जा रहे हैं··· मझले भइया शायद चले भी गए हों···

चन्दा : पर बारिश तो रुके···ऐसी बारिश में घर कैसे जाएगी रजनी···

रजनी : ···ठीक है, देखते हैं कुछ देर और···

(पर बारिश और तेज हो जाती है)

(अन्तराल)
(फेड आउट)
(फेड इन)

(घर में कोलाहल-सा है)

पिता जी : मैं कह रहा हूं (चीखकर) कोई भी घर से बाहर कदम नही रखेगा।

मां : तो इससे क्या कर लोगे।

पिता जी : कर लूंगा···कर लूंगा। (चीखते हुए) जब ये लोग मेरे बेटे होकर यही चाहते हैं तो यही होगा। मेरी खामोशी का नाजायज फायदा उठाते जा रहे हैं ये लोग···

मां : मैं कहती हूं चुप भी रहो (चीखकर)

पिता जी : अब मैं चुप नही रह सकता। बहुत हो लिया। जब इन लोगों को मेरी इज्जत का खयाल नही है तो मैं ही क्यों मरता जाऊं···तुम्हें कहना पड़ेगा इन बेटों से, बहुओं से ···सब लोग मिलकर रजनी की शादी के लिए रुपया दें···

मां : मैं नही कहूंगी।

पिता जी : मैं जाने नही दूंगा इन लोगो को। इस घर से ये तभी जा पाएंगे जब पांच-पांच हजार रुपया रख देंगे रजनी की शादी के लिए···मैं तुमसे कहता हूं रजनी की मां जाओ! जाओ और कहो! मैं अभी विशन, किशन को बुलाकर लाता हूं। आज सब तै हो जायेगा···

(जाने का आभास)
(साथ ही दोनो बहुएं आ जाती हैं)

ड़ी भाभी : यह क्या हो रहा है अम्मा जी!

मां : तुम्ही जानो बहू···अगर यही हाल रहा तो मैं एक दिन

घर छोड़ कर निकल जाऊंगी !

छोटी भाभी : आप क्यों निकल जाएंगी ? हम लोग निकल ही गए, अब ऐसी क्या आफत है ?

मां : कैसी बातें करती है मंझली बहू ! अब मेरा मुंह न खुलवा, तेरी वजह से किशन ने घर छोड़ा···

बड़ी भाभी : यह सब बातें छोड़ शान्ता ! अम्मा जी कान खोल कर सुन लीजिए हमारे सामने अपने बाल-बच्चे हैं···रजनी की शादी की ज़िम्मेदारी आप लोगों पर है। हम पर नहीं !

मां : शर्म नहीं आती तुम्हें यह कहते हुए बड़ी बहू !

छोटी भाभी : इसमें शर्म की क्या बात है ? सच्चाई आखिर सच्चाई है ? हमें क्या लेना-देना ! बुलाओगी शादी पर तो चले आएंगे, नहीं तो नहीं···

मां : (चीखकर) और हमने जो अपना पेट काट-काट कर बेटों को इतना पढ़ाया-लिखाया, लाखों रुपयों पर पानी फेर दिया, वह इसी दिन के लिए किया था।

बड़ी भाभी : चल शान्ता, इन बेकार की बातों से क्या ? मैं पहली गाड़ी से जाऊंगी, हम यहां इज्जत खोने के लिए नहीं आई थी—आपके घर का तिनका तक हमें नहीं चाहिए ···न हमें लेने से मतलब, न देने से मतलब···

मां : (चीखती हुई रो पड़ती है) चली जाओ तुम लोग यहां से ! असील की हो तो इस देहरी पर पैर न रखना अब ! आज से तुम लोग दुश्मन हो इस घर के !

बड़ी भाभी : चाहे जो कुछ कहो अम्मा जी ! जो कुछ तुमने हम लोगों के साथ किया है, वह हमीं जानती हैं···रजनी बीबी की शादी, तुम्हारी और बाबूजी की ज़िम्मेदारी है···

रजनी : (आकर आवेश में) मेरे लिए मत लड़ो तुम लोग ! भाभी ! बड़ी भाभी···मां···मेरे लिए मत लड़ो···

मां : मत बोल रजनी इन लोगों से···ये नागिनें हैं···

बड़ी भाभी : बदलू···बदलू ! सारा सामान निकालो हमारा···मैं एक मिनट नहीं रूकूंगी यहां···मदन लाला की शादी न होती तो मैं कभी न आती यहां···

रजनी : (रोकर) क्या हुआ है भाभी तुम्हें ! भगवान के लिए मेरे वास्ते मत लड़ो। इस बिगड़े हुए घर को और मत बिगाड़ो···

छोटी भाभी : आप चुप रहिए रजनी जी ! (ताने से) आपकी ही वजह से हमारी बेइज्जती हो रही है···

(तभी तेजी से खट-खट करते हुए पिता जी के आने का आभास)

पिता जी : आज से सब नाते रिश्ते खत्म ! (चीखकर) : इसी दिन के लिए इन बेटों को मैंने पैदा किया था। निकाल दो सामान इन सबका ! ये मेरे बहू बेटे नहीं—मेरे दुश्मन हैं। ये सब दुश्मन है। ये सब जलील हैं···जलील···

(फेड आउट)
(अन्तराल)

(घर में खामोशी छाई हुई है)

मां : (धीरे से पुकारती हुई) रजनी ! ओ रजनी ! (कराहती-सी है)

रजनी : हां मां···

मां : देख रजनी, अब मेहमानों में सिर्फ मदन के दोस्त मनोहर बाबू जाने को रह गए हैं··· : (कराहते हुए) ओह बेटी मैं बहुत थक गई हूं···! जरा तू जाके सब देखभाल ले···मुझसे तो उठा नहीं जाता···वे इसी पांच बजे वाली गाड़ी से जाना चाहते हैं···

रजनी : तो मैं क्या देखूं मां ?

मनोहर : ओह ! यह है तुम्हारा कमरा…मान लो कोई आ गया…

रजनी : (धीरे से हंसकर) तो क्या ? आप तो ऊपर वाले कमरे में ठहरे हुए थे, कह दीजिएगा कुछ भूल गया था… (फिर एकदम भाव बदलकर)…पर नहीं…मैं भी बस …नहीं…नहीं आप जाइए…आप नीचे जाइए… आप नीचे जाइए… (घबराहट भरी आवाज़)

मनोहर : और न जाऊं तो ? अब आ ही गया हूं…यह तुम्हारा कमरा है या किसी सन्यासिनी का…किताबें ज़रूर दिखाई पड़ रही हैं। कौन-कौन से इम्तहान पास कर लिए तुमने…

रजनी : अब तो एम. एड. करने की सोच रही हूं, पर कुछ होगा नहीं…

मनोहर : चलो मदन की शादी के बहाने तुमसे मिलना हो गया…

रजनी : (किसी सपने के देश से बोलती हुई) मुझसे मिलना हो गया ? कैसी बातें कर रहे हैं आप मनोहर बाबू।

मनोहर : लगता है, तुम सब भूल गई। वो दिन जब मैं मदन के साथ घर आता था…कभी-कभी तुम शर्बत पिलाती थी…

रजनी : (भावाकुल) भूली तो कुछ नहीं मनोहर…सब याद है…

मनोहर : पर अब सब बदल गया रजनी…मेरी ज़िन्दगी ने रास्ता ही बदल लिया…

रजनी : अब तो सुना है आप किसी बहुत अच्छे ओहदे पर हैं… बीबी भी अच्छी मिल गई, और भला क्या चाहिए आपको…

मनोहर : (लम्बी सांस लेकर) हर आदमी का दुःख अपनी तरह का अकेला है, कौन कितना और क्यों दुःखी है, यह कोई नहीं जानता…

रजनी : (झूठेपन के साथ) मुझे ही देखिए। मैं तो बिल्कुल दुःखी नहीं, कुछ मुझसे सीखिए।

मनोहर : छुपाने से क्या होगा रजनी···तुम्हारी आंखों में यह उठता हुआ धुआं पहले कहां था...यह वीरानी तब कहां थी···मुझसे छुपाओगी···

रजनी : (एकदम चौंककर) तुमने कब देखा था! तुमने कभी मेरी आंखें देखी थीं ? अब क्यों मुझे धोखा देना चाहते हो···(लगभग चीखकर) मैंने क्या बिगाड़ा है तुम लोगों का···तुम्हारा···क्यों मुझे भरमाते हो कि तुमने मुझे भर आंख देखा था···

मनोहर : मुझे गलत मत समझो रजनी···

रजनी : मैंने आज तक किसी को गलत नहीं समझा, यही एक गलती की है।

मनोहर : (एकदम बात बदलकर) तुम शादी क्यों नहीं कर लेती···मेरा मतलब···

रजनी : (खोखली-सी हंसी हंसकर) मैं और शादी !

मनोहर : क्यों ? इसमें हंसी की क्या बात ? तुम्हारे पिता जी को अभी तक कोई लड़का पसंद नहीं आया ?

रजनी : पसन्द की बात कहां उठती है। क्यों मजाक करते हो मनोहर···

मनोहर : शायद···शायद···(जैसे गला सूख रहा हो) तुम्हें पता नहीं···एक दिन मैंने तुम्हारे पिता जी से तुम्हारा हाथ मांगा था···

रजनी : (हंसती-हंसती एकदम रो पड़ती है) तुमने मेरा हाथ मांगा था। मेरा हाथ···

मनोहर : (विस्मित सा) हां, रजनी। तुम्हारा हाथ···

रजनी : (उसी तरह) आज ही लौट जाओगे ? रूकोगे नहीं···

मनोहर : मैं तो बहुत पहले लौट गया था रजनी···बहुत पहले···

(नीचे से आवाज आती है)

पिता जी : रजनी ! रजनी !

मनोहर : अच्छा रजनी ! मैं जा रहा हूं···और अब नहीं आऊंगा ···अब आके क्या करूंगा···

रजनी : जाओ···(बुदबुदाती है) सचमुच जा रहे हो। (एकदम आवेश में) सचमुच अब कभी नही लौटोगे···(सिसक पड़ती है)

(मनोहर के जाने की बहुत ही स्पष्ट पगध्वनि)

रजनी : (बुदबुदाती हुई) मुझे क्या पता था···कि इस रेगिस्तान मे भी एक लहर आई थी···

(पृष्ठभूमि से एक स्वर उभरता है···)

एक स्वर : कहर हो या कि बला हो,
काश ! तुम मेरे लिए होते !

रजनी : (बहुत गहरी सांस लेकर) काश ! तुम मेरे लिए होते···

(अंतिम शब्द गूंजते हैं)

(फेड आउट)

अवधि : तीस मिनट

रूपान्तर

तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम

[यह रचना साहित्य और रेडियो की अंतर्निहित शक्ति का एक मौलिक और सार्थक प्रतिफलन है। मूल रचना फणीश्वर नाथ 'रेणु' की है—जिसे मैंने 'नाटकों के राष्ट्रीय प्रसारण' के लिए रूपांतरित किया था। इसे स्वयं रेणु भी रूपांतरित कर सकते थे, क्योंकि तब वे आकाशवाणी पटना से सम्बद्ध थे, पर मूल लेखक ने यह रचनात्मक कार्य इसलिए नहीं किया था कि वह अपनी रचना के प्रति आसक्ति का शिकार हो सकता था। अतः इसे मैंने लिखा और ध्वनियों की सशक्त निर्मिति से इसे राष्ट्रीय कार्यक्रम में साकार किया गया। रेणु की रचनाओं में ध्वनियों का एक महत्वपूर्ण स्थान है, और उनमें वातावरण हमेशा प्रधान रहा है। रेणु की रचनाएं पढ़ते-पढ़ते दिखाई भी देती हैं, पर रेडियो में उसे एक और कोण दिया गया—कि पढ़ने वाले अंश श्रव्य बना दिए जाएं।
यह रचना रेडियो-लेखन की एक अत्यंत संश्लिष्ट मिसाल है]

(प्रभाव 1) (दूर पर बैलगाड़ी के जाने की ध्वनि। खेतों से होकर बहती हवा का स्वर और बहुत दूर पर लोकगीत की आती हुई स्वरलहरी—

'है अ···सावना-भादवा केर उमड़ल नदिया···'

इस गीत की केवल धुन सुनाई पड़ती है···शब्द स्पष्ट नहीं होते···फिर एकाएक पास ही बैलगाड़ी के जाने का आभास और हिरामन का बैलों को ललकारना···)

हिरामन : (दुआली से बैलों को पीटता हुआ)—हुं! क्या समझता है, बोरे की लदनी है क्या?

हीराबाई : (गाड़ी के पीछे से बड़ी ही महीन और करुणा से भरी आवाज़ में) अहा···मारो मत।

हिरामन : (जैसे भीतर ही भीतर चौंका हो और आवाज़ सुनकर सन्नाटे में आ गया हो) ऐं···(और अचकचा कर रह जाता है)

(बैलगाड़ी की चाल तेज़ हो जाती है)

हिरामन : (धीरे से फुसफुसाकर अपने आप से) कैसी है ये सवारी···बैलों को डाटो तो इस-बिस करने लगती है—और आवाज़···हू बहू फेनूगिलास···काली साड़ी ···जैसी मेले में तमाखू बेचने वाली बूढ़ी पहनती है··· पर···ये सवारी···अकेली औरत···बूढ़ी नहीं···भगवान जाने क्या लिखा है इस बार किस्मत में···सब अजगुत···(वह जीभ को तालू से लगाकर टि टि-टि टि आवाज़ निकालता है और बैलों को जैसे ज़ोर से हांकता है)

हीराबाई : भैया, तुम्हारा नाम क्या है ?

हिरामन : (अचकचाकर) मेरा नाम ? मेरा नाम है हिरामन।

(हीराबाई की बहुत हलकी-सी हंसी)

हीराबाई : तब तो मीता कहूंगी, भैया नहीं···मेरा नाम भी हीरा है।

हिरामन : इस्स ! (जैसे विश्वास नहीं करता)

हीराबाई : क्यों ?

हिरामन : मरद और औरत के नाम में फरक होता है···

हीराबाई : (हंसकर) हां जी···पर मेरा नाम हीराबाई है !

हिरामन : हूं ··(अपने से) हिरामन और हीराबाई···बहुत फरक है···(बैलों को झिड़कता है) ऐसे ही तीस कोस मंजिल कटेगी ! अरे नाटे (बैल से) तेरे पेट में शैतानी भरी है। चल···(दुआली की हलकी झड़प)

हीराबाई : मारो मत···धीरे-धीरे चलने दो। जल्दी क्या है ?

हिरामन : कोहरा देख रही हैं···इस आसिन-कातिक की भोर में छाने वाले कुहासे से पुरानी चिढ़ है हमें-हां···

हीराबाई : क्यों ?

हिरामन : बहुत बार सड़क भूलकर भटक चुका हूं···

हीराबाई : अच्छा !

हिरामन : पर आज तो बहुत अच्छा लग रहा है···कैसी पवनिया गंध आ रही है धान के फूले हुए पौधों से··· (धीरे से) पता नहीं कैसा लग रहा है···

हीराबाई : कब से गाड़ी हांकते हो ?

हिरामन : बीस साल से।

हीराबाई : काहे की लदनी करते हो ?

हिरामन : अब···अब···क्या बताऊं···बहुत लदनी की है··· तरह-तरह की···

हीराबाई : हमारे बक्से वाले से क्या पूछ रहे थे ? लाना नहीं चाहते थे क्या ?

हिरामन : (शरमा कर हंसता है और बैलों को हुंकारी देता है)
हीराबाई : चोरी-चमारी का माल ढोने की बात समझ रहे थे ?
हिरामन : नहीं·· (जैसे जीभ सूख गई हो) ये बात नहीं···हमें मालूम नहीं था कि सवारी है···हम समझे माल ढोना है···पर आपको देख के परतीत आ गई थी।
हीराबाई : क्यों ? माल नहीं ढोते ?
हिरामन : ढोते हैं ··सीमा के उस पार मोरंग राज नेपाल से धान और लकड़ी ढो चुका हूं···और···और कन्ट्रोल के जमाने में···वो···वो···चोर-बजारी का माल भी इस पार से उस पार पहुंचाया है···
हीराबाई : चोरबजारी का माल···?
हिरामन : फंस गए थे···कन्ट्रोल का जमाना था···कभी नहीं भूल सकता उस जमाने को···
हीराबाई : चोरबजारी का माल पहुंचाना तो बड़े जोखिम का काम है।
हिरामन : एक बार चार खेप सीमेंट और कपड़े की गाठों से भरी गाड़ी जोगबनी से विराटनगर पहुंचाने के बाद कलेजा पोख्ता हो गया था···
हीराबाई : हूं···
हिरामन : फारबिसगंज का हर चोर व्यापारी पक्का गाड़ीवान मानता था हमें···और वो जो बड़ी गद्दी वाले सेठ जी हैं न, हमारे बैलों की बड़ाई खुद करते थे।
हीराबाई : (हंसती है)
हिरामन : चार बार तो साफ निकल गया···पर चोरबजारी का माल लादने में पांचवी बार पकड़ा गया···
हीराबाई : पकड़े गए···?
हिरामन : हूं। सीमा के इस पास तराई में। महाजन का मुनीम हमारी गाड़ी पर ही गांठ के बीच चुक्की-मुक्की लगा-कर छिपा हुआ था···बीस गाड़ियों का लश्कर था···

(प्रभाव-2) (बीस गाड़ियों की एक साथ चलने की ध्वनि-कच्चा रास्ता···तराई का इलाका···साथ ही अन्य स्वर संकेत जो तराई के वातावरण का आभास दे सकें)

दरोगा : (कड़कती आवाज में) ऐय···गाड़ी रोको··· साले गोली मार दूंगा··· (कई गाड़ीवानों का बैलों को पुच-कारने का स्वर और गाड़ियों का एक साथ कचकचाकर रुकने का स्वर)

हिरामन : (एक गाड़ीवान से) अब मरे···दरोगा है··· (फुसफुसा कर) इसकी डेढ़ हाथ लम्बी चोरबत्ती की रोशनी कितनी तेज है···कैसे भुकभुका रहा है···

बिरजू-गाड़ीवान : इस चोरबत्ती की एक छटक भर पड़ जाए आंखों पर, घंटे भर के लिए आदमी अंधा हो जाता है।

हिरामन : मैंने तो पहले ही कहा था···बीस बिसावेगा···अब संभालो सबको···हवालात होगी···

दरोगा : हूं···ये बोरा सीधा कर···

हिरामन : हजूर चोरबत्ती उधर कर लें···

दरोगा : चोरबत्ती का बच्चा···उधर कर बोरा···रातों रात चोरबजारी का माल लादते हैं बदमाश···कौन अमल-दार है साथ में···

बिरजू-गाड़ीवान : मुनीम जी (डरकर)

दरोगा : बोरा हटाओ पहले···यह लाठी देखी है···

हिरामन : हटाता हूं सरकार···

दरोगा : (डरावनी हंसी) हा···हा···मुड़ीम जी ई-ई-ऐय-गाड़ी-वान···मुंह क्या देखता है रे! कम्बल हटाओ इस बोरे के मुंह पर से··· (जैसे लाठी का खोंचा मारता है) इस बोरे को···

मुनीम : (जैसे खोंचा खाकर) अरेरे···उइ···मर गए सरकार···

दरोगा : सरकार का बच्चा···बोरों में छुपा बैठा है···आज

पकड़ में आए हो…

मुनीम : हुजूर माई बाप…आपके लिए पहले ही लेके चला हूं-पान-पत्ता…कुबूल कर लें हुजूर…चार हजार…

(जैसे दरोगा फिर लाठी का खोचा मारता है उसके पेट में)

मुनीम : (दर्द से चीखकर) रहम] करें सरकार—पूरे पांच हजार नजर करता हूं…

(दरोगा फिर खोंचा मारता है)

दरोगा नीचे उतरो पहले…

(मुनीम की गाड़ी के नीचे कूदने की आवाज)

दरोगा : इधर आ मेरे साथ…(पीछे की ओर मुंह करके) सिपाहियों ! गाड़ियों पर पहरा लगा दो।

(पुलिस के बूटों की आहट और इधर-उधर जाकर रुकना। दरोगा और मुनीम की बातचीत का स्वर कुछ दूर चला जाता है।

हिरामन : (फुसफुसाकर) बप्पा रे बप्पा ! इतनी गारद। एक-एक गाड़ी पर पांच-पांच का पहरा…अब निस्तार नहीं बिरजू…

बिरजू : अब जेल होगी हिरामन…जेल…

हिरामन : बिरजू-जेल का डर नहीं…लेकिन ये बैल ? न जाने कितने दिन बिना चारा-पानी के सरकारी फाटक में पड़े रहेंगे…भूखे प्यासे…

बिरजू : हूं।

हिरामन : (उदासी से) फिर नीलाम हो जाएंगे…(एक क्षण की उदास खामोशी)

बिरजू : लगता है दरोगा जी से मुनीम जी की बात पट नहीं रही है।…अब मारे गए…

हिरामन : हूं…एक क्षण खामोश रहता है जैसे कुछ सोचता है) एक-दो-तीन—

बिरजू : ऐ, क्या सोच रहे हो···हिरामन !
हिरामन : कुछ नहीं···जान सांसत मे पड़ी है।
बिरजू : जरा तमाखू निकाल हिरामन !
हिरामन : उधर किसी और से ले ले···तब तक मैं जरा बैलों को तो खोल दूं, लदे खड़े हैं···
(प्रभाव-3) (गाड़ी पर से हिरामन के कूदने की आवाज़। फिर जैसे टिकरी निकाल कर गाड़ी में लगाता है ··बैलों को निकालता है···उनके खुरों और घंटियों की आवाज़···)
हिरामन : (गहरी पर राहत की सांस लेकर बैलों को थपथपाता है। और धीरे से कहता है···) चलो भैंयन···निकल चलो अब···अब तुम सरकारी फाटक में नहीं सड़ोगे··· जान बचेगी तो ऐसी सग्गड़ गाड़ी फिर बन जाएगी। (धीरे से बैलों को टिटकारता है, जैसे भगाने के लिए)
हिरामन : घबराना मत···बस···एक दो तीन···भाग चलो।
(प्रभाव-4) (बैलों का बेतहाशा भागने का स्वर···जैसे वे झाड़ियों में होकर भाग रहे हों और उनके साथ ही हिरामन की फूलती हुई सांस का स्वर···जंगल का वातावरण··· यह आवाज़ें धीरे-धीरे विलीन हो जाती हैं।
बिरजू : (जैसे खोजते हुए) ···हिरामन···हिरामन···अरे··· बैल कहां गए···
दूसरा गाड़ीवान : अभी झाड़ियों में किसी की आवाज़ सुनी थी···
बिरजू : लगता है गाड़ी छोड़कर भाग गया···
दूसरा गाड़ीवान : बैलों को भी भगा ले गया···घनघोर जंगल है, कहीं मरेगा···
बिरजू : वो सीधा पार जाएगा···बड़ा चालाक निकला··· हिरामन···
दरोगा : (तेज आवाज में) गाड़ियां घुमाओ···
दूसरा गाड़ीवान : अब तो जेहल हुई भइयन···

(प्रभाव-5) (उन्नीस गाड़ीवानों के स्वर उभरते हैं···जैसे वे आपस में कुछ बात कर रहे हों···और विलीन हो जाते हैं)

(क्षणिक अन्तराल)

(हिरामन की गाड़ी चलने का स्वर)

हिरामन : बड़े जब्बर बैल हैं अपने···दोनो बैल सीना तान कर तराई के जंगलों में घुस गए···पीछे-पीछे हम भाग रहे थे···राह सूंघते, नदी-नाला पार करते हुए पूंछ उठाकर भागे···और रात भर भागते रहे हम तीनों जन।

हीराबाई : बड़ी हिम्मत की···

हिरामन : तो और क्या करते ? घर पहुंच कर दो दिन बेसुध पड़ा रहा···पता नहीं मुनीम जी का क्या हाल हुआ ! अपनी सगड़ गाड़ी भी कहां गई, कुछ पता नहीं असली इस्पात लोहे की धुरी थी उसकी।

हीराबाई : (हुंकारी भरती है) हूं !

हिरामन : दोनो पहिए तो नहीं, एक पहिया एकदम नया था···

हीराबाई : (हंसकर) बड़ा नुकसान हुआ।

हिरामन : अरे बच गए···होश में आते ही कान पकड़ कर कसम खाई थी···

हीराबाई : (हंसकर) कसम ! कैसी कसम !

हिरामन : यही कि अब कभी ऐसी चीजों की लदनी नहीं लादेंगे··· चोरबजारी का माल ! तोबा-तोबा···

हीराबाई : (हंसकर) इसीलिए हमारे आदमी से पूछ रहे थे कि चोर-चमारी का माल तो नहीं।

हिरामन : हां···बिलकुल यही बात थी···जिन्दगी में दो ही कसमें खाई है···एक चोरबजारी का माल नहीं लादेंगे और दूसरे बांस !

हीराबाई : क्यों, बांस न लादने की कसम क्यों खाई है ?

हिरामन : अरे···बांस लादने से हमेशा काबू के बाहर रहती है गाड़ी···गाड़ी से चार हाथ आगे बांस का अगुआ निकला

रहता है—और पीछे की ओर चार हाथ पिछुआ—एक बार बांस का अगुआ पकड़ कर चलने वाला भाड़ेदार का नौकर लड़की स्कूल की ओर देखने लगा···बस मोड़ पर घोड़ागाड़ी से टक्कर हो गई···जब तक बैलों की रस्सी खींचूं-खींचूं···घोड़ागाडी की छतरी बास के अगुआ में फंस गई···(हंसता है) फिर···(गंभीर होकर) *घोड़ागाड़ी वाले ने तड़ातड़ चाबुक मारते हुए बुरी-बुरी* गालियां दीं·· बस उसी दिन से दूसरी कसम उठाई कि बांस की लदनी बन्द···गाली कौन खाए···हुं··· (बैलों को पुचकारता है)

हीराबाई : घर पर कौन-कौन है ?

हिरामन : बड़ा भाई है···खेती करता है···भाभी है···

हीराबाई : और कोई ?

हिरामन : (बहुत फीकी हंसी के साथ) और कोई ! (सकुचाकर उदासी से) बचपन में शादी हुई थी—गौने के पहले ही मर गई···उसका तो चेहरा तक याद नही।

हीराबाई : दूसरी शादी नही की ?

हिरामन : भाभी की जिद् थी कि कुंआरी लड़की से ही शादी करवाएगी। और कुंआरी का मतलब हुआ पांच-सात साल की लडकी···कौन मानता है सरवा कानून ! और कोई लड़कीवाला दो ब्याहू को अपनी लड़की गरज पड़ने पर ही दे सकता है···

हीराबाई : कुछ मुश्किल तो नही है।

हिरामन : अब चालिस के हुए—अब तय कर लिया है कि शादी नही करेंगे। कौन बलाय मोल लेने जाए।

हीराबाई : क्यों ?

हिरामन : *ब्याह करके फिर गाड़ीवानी क्या करेगा कोई ?*···और सब कुछ छूट जाए, गाड़ीवानी नहीं छोड़ सकता···हां ! (कुछ रुककर) आपका घर कौन जिल्ला है !

हीराबाई : कानपुर !

हिरामन : (हंसी छूटती है…बैल भड़कते हैं उन्हें पुचकार कर ठीक करता है) वाह रे कानपुर ! तब तो नाकपुर भी होगा ?

हीराबाई : (कुछ हंसकर) हां…हां…नाकपुर भी है…

(हिरामन की मुक्त हंसी)

हिरामन : (हंसी रुकते-रुकते) वाह रे दुनिया…क्या-क्या नाम होता है ? कानपुर…नाकपुर…

(गाड़ी चलने की आवाज कुछ उभरती है और हिरामन की हंसी दो-चार क्षणों तक गूंजती रहती है)

हीराबाई : अब हम कहां पर आ गए ?

हिरामन : अभी कई कोस है फारबिसगंज—आप तो नौटंकी में…

हीराबाई : हां, नौटकी में काम करती हूं…क्यों ? हीराबाई नाम से नहीं समझे ?

हिरामन : नौटंकी कम्पनी की औरत को बाई जी नहीं समझते हम …बाई जी तो…(बात दाब जाता है)

हीराबाई : क्यों…हममें क्या फ़रक है ?

हिरामन : (सकुचाकर) कम्पनी में काम करने वाली औरतों को देख चुका हूं…(अर्ध खामोशी)

(हीराबाई की हंसी)

हिरामन : (बात उड़ाकर) अब तेगछिया आ रहा है। कातिक की सुबह की धूप आप बरदाश्त न कर सकिएगा…कजरी नदी के किनारे तेगछिया के पास गाड़ी लगा देंगे…और दोपहरिया काट कर…

(दूसरी ओर से बैलगाड़ी आने का स्वर)

हिरामन : कैसे बेलीक गाड़ी लिए आ रहा है…देखता नहीं।

गाड़ीवान 3 : (कुछ दूर से पूछता है) मेला टूट रहा है क्या भाई ?

हिरामन : मेले फेले का हमें कुछ नहीं मालूम। हमारी गाड़ी पर तो विदागी है बिदागी… (ऊंची आवाज में नाराजी से)

गाड़ीवान : कौन गांव से ले आ रहे हो बहुरिया ?

हिरामन : छत्तापुर—पचीरा !

(गाड़ी आगे निकलने का आभास)

हिरामन : (चिढ कर) हुं…एक-एक बात पूछेंगे…पूछो तुमसे क्या ?…

हीराबाई : यह बिदागी क्या है हिरामन ?

हिरामन : (संकोच से भर कर)…विदागी…अरे…नैहर या ससुराल जाती हुई लड़की…और क्या…

हीराबाई : (हंसकर) और छत्तापुर-पचारी कौन गाव है ?

हिरामन : कहीं हो, ये लेकर आप क्या करिएगा ? (हंसता है) और क्या बताता उसे…अच्छा लाइए अब परदा कर दूं…धूप तेज है…

(एक क्षण बाद गाड़ी के चलने का स्वर कुछ और उभरता है)

हिरामन : देखिए अब हम आ गए तेगछिया के पास।…ये तीन पेड़ देख रही हैं यही है तेगछिया…दो पेड़ जटामासी बड़ हैं और एक…उस फूल का क्या नाम है…आपके कुरते पर जैसा फूल छपा हुआ है, वैसा ही, खूब महकता है। दो कोस दूर तक गंध जाती है…हां…उस फूल को खमीरा तमाखू में डालकर पीते भी हैं लोग।

हीराबाई : हूं। और उस अमराई की आड़ से कई मकान दिखाई पड़ते हैं…वहां कोई गांव है या मंदिर ?

हिरामन : (माचिस सुलगाकर) बीड़ी पी लें…आपको गंध तो नहीं लगेगी…

हीराबाई : नहीं !

हिरामन : (कश लेकर) वही है नामलगर ड्योढ़ी। जिस राजा के

मेले से हम लोग आ रहे हैं उसी का दिमाद गोतिया है···जारे जमाना···

हीराबाई : कौन जमाना ?

हिरामन : नामलगर ड्योढ़ी का जमाना। क्या था और क्या से क्या हो गया।

हीराबाई : तुमने देखा था वह जमाना ?

हिरामन : देखा नहीं, सुना है। बड़ी हैफवाली कहाना है। सुनते हैं घर मे देवता ने जनम लिया था। इन्द्रासन छोड़ कर देवता मिरतूभवन में जनम ले ले तो उसका तेज कैसे संभाल सकता है कोई···सूरजमुखी फूल की तरह माथे के पास तेज खिला रहता···लेकिन नजर का फेर, किसी ने नहीं पहचाना···

हीराबाई : फिर···

हिरामन : एक बार उपलैन में लाटसाहब मय लाटनी के, हवागाड़ी से आए थे·· लाटनी ने पहचान लिया—बड़ा डंम-फंटलैंट किया और बोली—ए मैन राजा साहब सुनो, यह आदमी का बच्चा नही है, देवता है !

हीराबाई : तब ? उसके बाद क्या हुआ मीता ?

हिरामन : इस्स ! कत्था सुनने का बड़ा शौक है आपको ?···हंस कर बात उड़ा दी सभी ने···तब रानी को सपना देने लगा देवता···सेवा नहीं कर सकते तो जाने दो, नहीं रहेंगे तुम्हारे यहां···इसके बाद देवता का खेल शुरू हुआ···सबसे पहले दो दंतार मरे, फिर घोड़ा, फिर पटपटांग···

हीराबाई : पटपटांग क्या ?

हिरामन : यही धन-दौलत, माल-मवेशी···सब साफ···देवता इन्द्रासन चला गया···

(हीराबाई गहरी सास लेती है)

हिरामन : और देवता ने जाते-जाते कहा—इस राज मे कभी एक

छोड कर दो बेटा नही होगा···धन हम अपने साथ ले जात हैं···गुन छोड़ जाते है···देवता के साथ सभी देव-देवी चले गए···सिर्फ सरोसती मैया रह गई···उसी का मंदिर है।

(दूर पर माल लादे घोड़ों की टापें)

हिरामन : (गीत की धुन गुनगुनाता है) जै मैया सरोसती··· अरजी करत बानी···हमरा पर होखू सहाई है मैया, हमरा पर होखू सहाई···

(घोडे लदे हुए पास आते हैं)

हिरामन : क्या भाव पटुआ खरीदते हैं महाजन ?

बनिया : नीचे सत्ताइस-अट्ठाइस, ऊपर तीस ! जैसा माल वैसा भाव···मेले का क्या हाल चाल है भाई। कौन नौटकी का खेला हो रहा है—रौता कम्पनी या मथुरा मोहज ?

हिरामन : मेले का हाल मेले वाले जाने···हम तो छत्तापुर-पचीरा से आ रहे हैं—

(घोड़े वालों का आभास विलीन हो जाता है)

हिरामन : (बैलों से) दम बांध कर चल भैयन ! (गाड़ी का स्वर उभरता है और हिरामन जैसे खोया-खोया गाने लगता है)

हिरामन : सजनवा वैरी हो गए हमार सजनवा···सजनवा···अरे चिठिया हो तो सब कोई बाचें, चिठिया हो तो···हाय करमवा, होय, करमवा···

हीराबाई : वाह ! कितना बढ़िया गाते हो तुम।

हिरामन : (जैसे सभलकर) अरे ये गीत···छोकरा नाच का गीत, न जैसे कैसे याद आ गया···बहुत पहले सुना था यह गीत···बीस-पच्चीस साल पहले विदेशिया बलवाही, छोकरा नाच वाले एक से एक ग़जल खेमटा गाते थे··· कहा चला गया वह ज़माना···हर महीने गाव में नाच

वाले आते थे रोज देखते थे हम'''बड़ी बोली-ठोली सुनी भाभी की'''इसी बात पर भाई ने घर से निकल जाने को कहा था'''

हीराबाई : नाच देखने पर ?

हिरामन : हां'''यह लीजिए कजरी नदी आ गई'''

(क्षीण नदी का आभास। बैलगाड़ी के रुकने का स्वर।)

हिरामन : लीजिए, घाट पर हाथ मुंह धो आइए—

(बैल हुंक-हुंक करते हैं)

हिरामन : मैयन (बैलों से) प्यास सभी को लगी है'''लौटकर आता हूं तो घास दूंगा'''बदमाशी मत करो'''

(हिरामन शांति की एक गहरी सांस लेता है)

(क्षणिक अन्तराल)

हिरामन : उठिए'''नींद तोड़िए'''दो मुट्ठी जलपान कर लीजिए'''

हीराबाई : (नींद से उठकर) इतनी चीजें कहां से ले आए ? मिट्टी के बर्तन, केले के पात और दही।

हिरामन : इस गांव का दही नामी है'''चाह (चाय) तो फारबिसगंज जाकर ही पाइएगा।

हीराबाई : चाय फिर पीते रहेंगे—तुम पत्तल बिछाओ'''(एक क्षण रुककर) क्यों, तुम नहीं खाओगे, तो मैं भी नहीं खाऊंगी'''समेट कर रख लो अपनी झोली में'''

हिरामन : इस्स'''अच्छी बात'''आप पा लीजिए पहले'''

हीराबाई : पहले पीछे क्या ? तुम भी बैठो। बैठो न'''पत्तल बिछाओ।

हिरामन : (सकुचाकर) लीजिए'''

(आनन्दमय संगीत के साथ समय का व्यवधान)

(अन्तराल के बाद गाड़ी फिर चलने का स्वर

हिरामन : '
गाड़ीवान 4 :
हिरामन : (चिढ़कर और गाड़ी चलने के साथ) हूं...सिरपुर बाजार के इसपिताल की डागडरनी हैं। रोगी देखने जा रही हैं। पास ही कुड़पागाम...समझे......हूं...
हीरावाई : मीता...तुम क्या-क्या बताते जा रहे हो मेरे बारे में... कभी बिदागी कभी डागडरनी...पहले कौन गांव बताया था...पत्तापुर छपीरा !
हिरामन : (ठहाका लगाकर) पत्तापुर छपीरा। असल बात यह है कि ये लोग खुद छत्तापुर पचीरा के गाड़ीवान थे... उनसे कैसे कहता...इसीलिए कुड़पागाम बता दिया...
(कुछ दूर पर बस्ती का शोर)
हीरावाई : बस्ती आ गई—
(गाड़ी का शोर उभरता है और उसी के साथ बच्चों का शोरगुल भी और यह गीत भी...
'लाली लाली डोलिया में
लाली रे दुलहिनिया
पान खाये सैया हमार...'
साथ ही हिरामन की हुलास भरी हंसी सुनाई पड़ती है)
हिरामन : कुछ समझती हैं आप ! अपनी परदेवाली गाड़ी देखकर बच्चे कह रहे हैं...ओ दुलहिनियां ! तेगछिया गांव के बच्चों को याद रखना...लौटती बेर गुड़ का लड्डू लेती अइयो...लाख बरस तेरा दुलहा जिये...लाली-लाली डोलिया...लाली रे दुलहनिया...(कहते-कहते हिरामन स्वयं जैसे सपने में डूब जाता है)
हीरावाई : (गहरी सांस लेकर) हां...

हिरामन : (एक क्षण खामोश रहता है फिर गुनगुनाता है) सजनि रे झूठ मत बोलो, खुदा के पास जाना है···

हीराबाई : क्यों मीता, तुम्हारी अपनी बोली में कोई गीत नहीं है क्या ?

हिरामन : (हंसकर) गांव की बोली आप समझिएगा ?

हीराबाई : हूं-हूं···

हिरामन : गीत जरूर ही सुनिएगा, नहीं मानिएगा···इस्स ! इतना शौख गाव का गीत सुनने का है आपका···तब लीक छोड़नी होगी—चालू रास्ते में कैसे गीत गा सकता है कोई ? कौन सा गीत सुनेंगी ?

हीराबाई : जो तुम्हारा मन करे मीता।

हिरामन : आपको गीत और कथा दोनों का शौख है।—इस्स, अच्छा तो सुनिए महुआ घटवारिन का गीत···

(प्रभाव-6) (नोट—यह कथागीत इस रूप में प्रस्तुत किया जाए कि केवल ध्वनि प्रभावों से कथा की मुख्य घटनाएं उभारी जाएं और हिरामन के स्वर में गीत की पंक्तियां रहें और एक प्रवक्ता द्वारा कथा के अंश प्रस्तुत किए जाए।)

(नदी का शोर···घाट पर बेड़ों का कोलाहल··· हिरामन गीत का आलाप लेता है···पृष्ठभूमि में ध्वनि प्रभाव रहते हैं और उन दोनों पर सुपरइम्पोज प्रवक्ता का स्वर)

प्रवक्ता : आज भी परवान नदी में महुआ घटवारिन के कई पुराने घाट हैं (नदी का स्वर कुछ उभरता है) इसी मुलुक की थी महुआ। थी तो घटवारिन लेकिन सौ सतवंती में एक थी। उसका बाप दारू-ताड़ी पीकर दिन रात बेहोश पड़ा रहता है। और उसकी सौतेली मां साक्षात राकसनी···काम कराते-कराते महुआ की हड्डी निकाल दी थी राकसनी ने। महुआ जवान हो

गई पर सौतेली मां ने कहीं शादी-ब्याह की बात भी नहीं चलाई।

(घहराती नदी का शोर—उसी पर सुपरइम्पोज हिरामन का गीत···)

हिरामन : हे सावना-भादवा केर उमड़ल नदिया-गे मैयो···
गे रैनि भयावनि हे···तड़का तड़के धड़के करेजा मोरा···
कि हमहुं जे वारी नान्हीं रे···

(महुआ की सिसकियां उभरती है- नदी का शोर और महुआ की सिसकियां कुछ क्षण उभर कर पृष्ठभूमि में चली जाती हैं।)

प्रवक्ता : (सुपरइम्पोज) ओ मां ! सावन-भादों की उमड़ी हुई नदी···भयावनी रात···बिजली कड़कती है···

(भयानक बरसाती रात और बिजली कड़कने की ध्वनि में मिक्स महुआ की भयग्रस्त सिसकियां···और सांसें)

प्रवक्ता : *महुआ का कलेजा धड़कता है, वारी-क्वांरी नन्ही बच्ची,* अकेली कैसे जाए घाट पर···सो भी एक परदेसी बटोही के पैर में तेल लगाने के लिए···रात में अपनी बज्जर किवाड़ी बंद कर ली···महुआ की सौतेली मां ने *जुल्म किया है।*

(एक तेज बौछार का स्वर, जैसे बंद दरवाजों पर पड़ कर बिखर गई हो)

प्रवक्ता : और महुआ अपनी मां को याद करके रोती है···आज उसकी मां होती तो दुरदिन में कलेजे से सटाकर रखती···और अकुला कर महुआ कहती है···गे मइया ! इसी दिन के लिए, यही दिखाने के लिए तुमने कोख में रखा था···

हिरामन : हुंऽरे···डाइनिया मैयो, मोरी नोनवा चटाई काहे नाहिं ···मारलि सौरी घर···अ···अ

एहि दिनवा खातिर छिनरो घिया
तेहु पोसिल कि नेनू...दूध...उटगन...

प्रवक्ता : क्या इसी दिन के लिए मैया मोरी तूने मुझे पाला-पोसा था कि मैं बुरी राह पर पड़ जाऊं...मैं अपना सतीत्व नष्ट कर दूं...लेकिन रोने-धोने से क्या होता है? सौदागर ने पूरा दाम चुका दिया था महुआ का...बाल पकड़कर घसीटता हुआ चला—और माझी को हुकुम दिया.. नाव खोलो।

(नाव खुलने की ध्वनि और नदी में तेजी से चलते पतवारों की आवाज। और साथ ही महुआ के चीखने का स्वर...)

प्रवक्ता : और अपने सतीत्व को बचाने के लिए जब महुआ को कुछ नहीं दिखाई पड़ा तो...

(नाव के पतवारों के चलने, नदी का शोर... और भादों की बारिश की ध्वनि के बीच महुआ की नदी में कूदने की गूंजती हुई आवाज)

प्रवक्ता : महुआ कूद पड़ी घहराती नदी में...

(एक और झमाके की आवाज)

और उसी के पीछे कूदा सौदागर का नौकर...जो महुआ पर मोहित हो गया था...उलटी धारा में तैरना खेल नहीं...सो भी भादों की भरी नदी में...महुआ असल घटवारिन की बेटी थी...मछली भी भला थकती है पानी में?

(प्रभाव-7) (घहराते पानी में महुआ के तैरने और भारी सांसों का आभास-वातावरण के सारे प्रभाव साथ रहते हैं...और एक स्वर उन प्रभावों के ऊपर गूंजता रह जाता है...)

सौदागर के नौकर का स्वर : महुआ...महुआ...महुआ...

(वह स्वर हिरामन का ही होगा)

(दूर गीले तटों से यह स्वर टकरा कर गूंजता है और धीरे-धीरे दूर होता हुआ विलीन हो जाता है।)

(क्षण भर सन्नाटे का अहसास)

हिरामन : बेहद उदासी से गहरी सांस लेता है)

हीराबाई : (वैसी ही उदासी और गहरी सांस के साथ) तुम तो उस्ताद हो मीता।

हिरामन : इस्स !··· (एक क्षण बाद) मुझे लगता है जैसे मैं खुद सौदागर का नौकर हूं···और महुआ मुझ पर परतीत नहीं करती···उलट कर देखती भी नहीं···और मैं तैरते-तैरते थक गया हूं···आज-आज जैसे मैं पंद्रह-बीस बरस तक उमड़ी हुई नदी की उलटी धारा में तैरते-तैरते मन को किनारा मिल गया है···किनारा मिल गया है··· (गहरी सांस लेकर चुप हो जाता है)

(धीरे धीरे विलयन—अन्तराल)

(कुछ क्षणों के बाद गाड़ियों का शोर और कुछ लोगों के स्वर उभरते हैं)

हिरामन : फारबिसगंज आ गया···

हीराबाई : मेले की हर रोशनी सूरजमुखी फूल-सी लगती है···

हिरामन : अब रात-भर आप इसी गाड़ी में आराम करें···सुबह कम्पनी में चली जाएं···ठीक है न ? गाड़ी को तिरपाल से घेरे देता हूं···

(कई स्वर पास ही उभरते हैं)

पलटदास : अरे कौन हिरामन ?

लालमोहर : किस चीज़ की लदनी है हिरामन ?

हिरामन : चुप-चुप जरा धीरे बोल लालमोहर···कम्पनी की औरत है, नौटंकी कंपनी की।

पलटदास : कम्पनी की ई···ई···

लालमोहर : इधर आ हिरामन, जरा सुन।

हिरामन : जरा रुक (दूसरी ओर को) सुनती हैं आप। होटिल तो नहीं खुला होगा कोई, हलवाई के यहां से पक्की ले आएं।

हीराबाई : (पैसे खनकाने की आवाज़) लो, तुम खा आओ, मैं कुछ नहीं खाऊंगी अभी।

हिरामन : क्या दे रही हैं···पैसा ? इस्स ! पैसा देकर हिरामन ने कभी फारबिसगंज में कच्ची-पक्की नहीं खाई···पैसा आप रखें !

हीराबाई : लो न, पैसा लो···और खाना खा आओ।

हिरामन : बेकार मेला-बाज़ार में हुज्जत मत कीजिए···पैसा रखिए···

लालमोहर : सलाम बाई जी···मैं हिरामन का साथी हूं···खाने की कोई परेशानी नहीं है चार आदमी के भात में दो आदमी खुशी से खा सकते हैं। बासा पर भात चढ़ा हुआ है। हें···हें···हें···हम लोग एकहि गांव के हैं··· गौवों-गरामित के रहते होटिल और हलवाई के यहां खाएगा हिरामन ?

हिरामन : जी···ठीक कहता है लालमोहर। फारबिसगंज तो हमारा घर दुआर है···हां, हम अभी आते हैं···

(कुछ दूर पर चार-पांच लोगों की फुसफुसाहट रात का आभास)

मुन्नीराम : इस्स ! तुम भी खूब हो हिरामन ! उस साल कम्पनी का बाघ लादा था इस बार कम्पनी का जनाना···

हिरामन : अरे उस साल जब सरकस कम्पनी का बाघ लादा था न, तब पता है···सरकस कम्पनी की मालकिन अपनी दोनों जवान बेटियों के साथ बाघ-गाड़ी के पास आती थी··· बाघ को चारापानी देती थी, प्यार भी करती थी खूब··· और···उसकी बेटी ने हमारे बैलों को डबलरोटी-बिस्कुट खिलाया था। यार बड़ा मज़ा आया था ··

लालमोहर : मजा तो आया ही होगा —

हिरामन : पर लालमोहर बघाइन गंध बर्दास्त नहीं कर सकता रे कोई। दो दिन तक नाक से कपड़ा की पट्टी नहीं खोली थी···बड़ी बुरी होती है बाघ की गंध बदन में बस गई थी···

धुन्नीराम : और कंपनी की औरत की गंध···

हिरामन : *अब क्या बताऊं* ···*ऐसा लगता था जैसे चम्पा का फूल* गाड़ी में महक उठता हो···बड़ी गुदगुदी लगती थी पीठ में···

लालमोहर : गुदगुदी ?

हिरामन : हां, जब-जब सोचूं तभी गुदगुदी लगती थी···बड़ी देर तक तो उसकी तरफ देखने की हिम्मत नहीं पड़ी···

धुन्नीराम : नाम क्या है जनाना का···

हिरामन : हीराबाई बताती है···अरे जब गाड़ी पूरब की ओर मुड़ी न, तब एक टुकड़ा चांदनी गाड़ी में समा गया··· तब पहली बार देखा उसे अरे आप ! परी है परी।

लालमोहर : आखिर कम्पनी की औरत है !

हिरामन : नाक पर नकछवि का नग ऐसे चमकता है जैसे लहू की बूंद। हम तो समझे कि भैया कही कोई और बात न हो···कजरी नदी पर गाड़ी रोकी तो हीराबाई हाथ-मुंह धोने गईं···जैसे ही उतरीं मैंने पहले पैर देखे··· जान में जान आई···पैर टेढ़े नहीं सीधे थे···लेकिन तलुवा···एकदम लाल था···हीराबाई गाड़ी से उतर कर सीधे घाट की ओर चली गई···गांव की बहु बेटियों की तरह सिर नीचा करके···कौन कहेगा कि कम्पनी की औरत है···और नही लड़की···शायद कुंआरी ही है।

धुन्नीराम : लेकिन हिरामन, सुनते हैं कि कम्पनी में तो पतुरिया रहती हैं।

हिरामन . सुन रहे हो लालमोहर इस धुन्नीराम की बात···

धुन्नीराम : हां···हां···ठीक ही कह रहा हूं···

हिरामन : धत्त···

लालमोहर : कैसा आदमी है तू। पतुरिया रहेगी, कम्पनी में भला। देखो इसकी बुद्धि! सुना है, देखा तो नहीं है कभी।

धुन्नीराम : तो ग़लत होगा···

पलटदास : हिरामन भाई, जनाना जात अकेली रहेगी गाड़ी पर··· कुछ भी हो जनाना आखिर जनाना है···कोई जरूरत ही पड़ जाए।

हिरामन : बात ठीक है···पलटदास तुम लौट जाओ-गाड़ी के पास ही रहना। और देखो, गपशप जरा होशियारी से करना। हां···

पटलदास : तो जाता हूं···

हिरामन : हां···ऐ लालमोहर···जब हीराबाई उत्तर कर मुंह-हाथ धोने चली गई न, तो मैंने गाडी में पड़े हुए उसके तकिए को छूआ···गिलाफ पर फूल कढ़े थे···उन्हें सूंघा लालमोहर···हाय रे हाय इतनी सुगन्ध···इतनी सुगन्ध··· ऐसा लगा जैसे पांच चिलम गांजा फूंका हो···आंखें तक लाल हो गयी···

धुन्नीराम : तू तो करमसांड है···

हिरामन : आज इतरगुलाब की खुशबू बस गई है देह में···

लालमोहर : (सूंघ कर) एह! गमछो तक महक रही है···

(दूर पर पलटदास की आवाज)

पलटदास : (परेशानी में) ए हिरामन···(तेज सांसें···भागता हुआ आता है और तेज चलती सांस के कारण कुछ नहीं कह पाता)

हिरामन : क्या हुआ? बोलते क्यों नहीं! (एक क्षण बाद) कुछ गड़बड़ हुआ···पहले ही कहा था, गपशप होशियारी से करना···

…बताऊं भैयन ! मैं पहुंचा तो उन्होंने पूछा… हिरामन के साथी हो ? मैंने कहा… हां ! वह लेट गई…चेहरा मोहरा, बोली बानी देख सुनकर, न जाने क्यों कलेजा कांपने लगा…दास बैस्नब हूं भाई …सो ऐसा लगा कि रामलीला की सिया सुकुमारी थकी लेटी हों…बस मन में, जैजैकार होने लगा… सियावर रामचंद्र की जै…सीता महारानी के चरण टीपने की इच्छा हुई…जैसे ही हाथ रक्खा-वो तमक कर बैठ गई और बिगड़ पड़ी…अरे पागल है क्या ? जाओ भागो।

और आंखों से चिनगारी निकल रही थी…छटक-छटक,…बस मैं भागा…

लालमोहर : तुम्हें पहले ही बता दिया था…

पलटदास : अब मैं नही रूकूंगा यहां…एक व्यापारी मिल गया है …अभी ही टीशन जाकर माल ले जाऊंगा…अब हिम्मत नही पड़ती…

घुन्नीराम : जा भाग…लाद जाके माल…

(पलटदास जाता है)

पलटदास : (जाते-जाते) बड़ी गलती हो गई…अच्छा जा रहा हूं…

लालमोहर : (थूककर) बड़ा कमीना आदमी है…

घुन्नीराम : छोटा आदमी है…पैसे-पैसे का हिसाब रखता है…

हिरामन : हुं…कीर्तनियां है न…अच्छा अब आराम करें…

लालमोहर : हीराबाई तो सवेरे जाएगी न नौटंकी में…

हिरामन : हां !

(विलयन)

(सुबह का आभास)

हिरामन : ए लालमोहर… हीराबाई अब रौता नौटंकी में जाय रही हैं…साथ ले जाने वाला आदमी भी आ गया… वही बक्से वाला है…

लालमोहर : अच्छा ! इधर ही आ जाओ।

बक्सेवाला : ए हिरामन, सुनो ! यह लो अपना भाड़ा और यह लो दच्छिना··· पच्चीस-पच्चीस, पचास। (रुपयों की खन-खनाहट)

हिरामन : (धीरे से) इस्स ! दच्छिना !

हीराबाई : लो पकड़ो (रुपये खनकते हैं) और सुनो, कल सुबह रौता कम्पनी मे आकर मुझसे भेंट करना···पास बनवा दूंगी···बोलते क्यों नहीं ?

लालमोहर : इलाम बक्सीस दे रही हैं मालिकिन, तो ले लो हिरामन ! और कल भेंट कर आना···

धुन्नीराम : गाड़ी बैल छोड़कर नौटंकी कैसे देख सकता है···कोई गाडीवान मेले में···

लालमोहर : ले लो हिरामन।

हिरामन : लाइए···

बक्सेवाला : इधर से आइए, बाई जी ! इधर से···

हीराबाई : अच्छा मैं चली भैयन !

(हीराबाई चली जाती है)

हिरामन : (फुसफुसाकर) कम्पनी की औरत कम्पनी में जा रही है··· (फिर क्षण बाद) इससे पहले भी लालमोहर भाई, नौटंकी देखने को कह रही थी, बड़ी जिद् करती है।

लालमोहर : फोकट मे देखने को मिलेगी ?

धुन्नीराम : और गाव नही पहुंचेगी यह बात···

हिरामन : नहीं जी ! एक रात नौटंकी देखकर जिन्दगी भर बोली ठोली कौन सुनेगा। देसी मुर्गी विलायती चाल।

लालमोहर : फोकट में देखने पर भी तुम्हारी भौजाई बात सुनाएगी···

हिरामन : देखा जाएगा···

(पाज़)

(दूर पर मेले का शोर···नौटंकी का एलान करने वाले की दूरस्थ आवाज़)

लालमोहर : (दौड़ता हुआ आता है) ऐ ऐ हिरामन ! यहा क्या बैठे हो, चलकर देखो कैसा जै जै कार हो रहा है। मय बाजा-गाजा-छापी-फाहरम के साथ हीराबाई की जै जै कर रहा है।

(एलान करने वाला नज़दीक आता है। डुग्गी की आवाज़)

डुग्गीवाला : भाइयो ! आज रात ! दि रीता संगीत नौटंकी कम्पनी की स्टेज पर देखिए···गुलबदन ! देखिए गुलबदन ! ···आपको यह जानकर खुशी होगी कि मथुरा मोहन कम्पनी की मशहूर एक्ट्रेस मिस हीरादेवी, जिसकी एक-एक अदा पर हज़ार जान फिदा हैं, इस बार हमारी कम्पनी में आ गई हैं···आज की रात···मिस हीरा देवी गुलबदन···

(इस प्रभाव को मेले से शोर से मिक्स किया जाता है)

हिरामन : (बुदबुदाता है) हीराबाई, मिस हीरादेवी ? लैला··· गुलबदन···फिलिम एक्ट्रैस को मात करती है···

लालमोहर : देखा, कैसा ऐलान है ? सब जगह नाम हो रहा है···

हिरामन : धन्न है धन्न है। है या नहीं ?

लालमोहर : अब बोलो, अब भी नौटंकी नही देखोगे ? कम्पनी में जाकर अब भी भेंट कर आओ—जाते-जाते पुरसिस कर गई थी···

हिरामन : धत्त, कौन भेंट करने जाए, कम्पनी की औरत कम्पनी में गई, अब उससे क्या लेना-देना। चीन्हैगी भी नहीं··· (रुककर) पर लालमोहर ज़रूर देखना चाहिए क्या ?

लालमोहर : वो चीन्हैगी···तुम चलो तो···नौटंकी शुरू होने वाली है।

हिरामन : तो बात तुम्ही करना···कबराही में तुम्हीं बात कर सकते हो···चल···

(कुछ देर मेले का शोर···और इन लोगों का चलना···इसी के बाद नौटंकी के बाहर का शोर···बढ़ जाता है)

लालमोहर : ए काले कोट वाले बाबू साहब ! जरा सुनिए तो···

नौटंकी मैने० : क्या है···इधर भीतर कैसे घुस आए ?

लालमोहर : वो···वो···है न···गुल गुल नहीं नही बुलबुल, नहीं···

मैनेजर : क्या गुलगुल बुलबुल ? निकलो यहा से।

हिरामन : वो हीरादेवी किधर रहती है, बता सकते हैं मनीजर साहब ?

मैनेजर : तुम्हें इधर आने किसने दिया ? मैं कहता हूं निकलो ! यह नौटंकी के रहनेवालों की जगह है समझे ?

लालमोहर : अरे रे···सुनिए तो···

हीराबाई : (कुछ दूर से) कौन, हिरामन है ?

बक्सेवाला : जाओ भाई चले जाओ हिरामन···(मैनेजर से) मनीजर साब···हीराबाई का आदमी है ये लोग।

मैनेजर : ठीक है जाओ···

हीराबाई : यहां आ जाओ अन्दर···नौटंकी देखना अभी···ये लो पांच पास···

लालमोहर : पांच···

हीराबाई : हां, हां, तुम सब लोग देखना···अच्छा मैं तो अब भीतर जाऊंगी···ठीक है न ? तुम लोग बैठो चलकर कपड़ा-घर मे···और देखो···जब तक मेले में हो, रोज़ रात को देखना आकर···अच्छा मैं जाऊं···

(हीराबाई जाती है)

(मेले का आभास और नौटंकी का शोर)

हिरामन : पांच पास हैं···
लालमोहर : लेकिन पाच पास का क्या होगा ? पलटदास तो फिर पलटकर आया ही नही अभी···
हिरामन : जाने दो अभागे को। तकदीर में लिखा ही नहीं···और देख···लालमोहर ! धुन्नी और लहसुनवा भी खड़े ताक रहे हैं···ए धुन्नी !
धुन्नीराम : (पास आकर) पास ले आए ?
हिरामन : हां, लेकिन पहले गुरु कसम खानी होगी, सभी को कि गाव घर में यह बात एक पंछी भी न जान पाए।
लालमोहर : कौन बोलेगा गांव में जाकर ? पलटा ने अगर बदमाशी की तो फिर साथ नही लाऊंगा।
धुन्नीराम : पहले यह फैसला कर लो कि गाड़ी के पास कौन रहेगा ?
लालमोहर : रहेगा कौन, यह लहसनवां कहां जाएगा ?
लहसनवा : हे ए ए मालिक, हाथ जोड़ते हैं। एक्को झलक···बस एक झलक···
हिरामन : अच्छा, अच्छा, एक झलक क्यों, एक घंटा देखना, मैं चला जाऊंगा···उधर देख टिकटघर के पास···लोग कैसी धक्कामुक्की कर रहे हैं।
पलटदास : ए हिरामन भाय !
हिरामन : अरे आ गए पलटदास···
पलटदास : कसूरवार हैं, जो सजा दो तुम लोग सब को मंजूर है, लेकिन सच्ची बात कहें कि सिया सुकुमारी···
हिरामन : (बात काट कर) देख पलटा, यह मत समझना कि गांव घर को जनाना है, तुम्हारे लिए भी पास दिया है, तमाशा देखो।
लालमोहर : लेकिन इस शर्त पर पास मिलेगा कि बीच-बीच में लहसुनवा को भी···
पलटदास : हां, हां, ठीक है···फाटक उधर है···भीतर चलें

(पाज)

(नौटंकी के भीतर का वातावरण)

पलटदास : देखो भाय ! परदे पर राम बनगमन की तस्वीर है··· राम सिया सुकुमारी और लखनलला को देखो···जै हो ! जै हो···

हिरामन : क्यों पलटा ? छापी सभी खड़े हैं या चल रहे हैं ?

लालमोहर : खेला अभी परदे के भीतर है। अभी जमनिका दे रहा है लोग जमाने के लिए।

स्वर 1 : नाच शुरू होने में अभी देरी है, तब तक एक नींद ले लें।

स्वर 2 : सब दर्जा से अच्छा अठनिया दर्जा, सबसे पीछे सबसे ऊंची जगह पर जमीन पर गरम पुआल है है···

स्वर 3 : कुरसी बेंच पर बैठकर इस सर्दी में तमाशा देखने वाले अभी घुच-घुच कर उठेंगे चाह पीने।

स्वर 1 : खेला शुरू होने पर जगा देना भाई, नहीं नहीं···हिरिया जब स्टेज पर उतरे तब, समझे···

हिरामन : (हिकारत से) हिरिया ! बड़ा लटपटिया आदमी मालूम होता है। ऐ लालमोहर ! इस आदमी से बति-की जरूरत नहीं।

(नगाड़े का शोर-फुसफुसाहट···खेला शुरू हो गया···खेल शुरू होने का आभास)

हिरामन : (गहरी सांस लेकर) हीरादेवी हैं।

पलटदास : जै हो ! जै हो। दरबार लगा है गुलबदन का।

(यहां पर वास्तविक नौटंकी गुलबदन का वह सीन कुछ क्षणों के लिए प्रस्तुत किया जाए जिसमें गुलबदन तख्तहजारा के लिए ऐलान करती है)

स्वर 1 : इलबत नाचती है साली···हाय···(गंदगी से सिसकारी भरता है) क्या गला है !

स्वर 2 : हीराबाई पान-बीड़ी-सिगरेट-जर्दा कुछ नहीं खाती इसी से तो इत्ती खूबसूरत है''' आय-हाय'''

स्वर 3 : ठीक कहता है। बड़ी नेम वाली रंडी है'''

हिरामन : कौन कहता है कि रंडी है ?

पलटदास : दांतों में मिस्सी कहां है'''पाडर से दांत धोती है'''

स्वर 2 : अरे हीराबाई है'''आखिर पतुरिया है'''

लालमोहर : (गरजकर) कौन पतुरिया कहता है ?

स्वर 3 : तुम्हें बात क्यों लग गई'''

हिरामन : चुप बे !

लालमोहर : मारो साले को'''पतुरिया कहता है'''मारो'''

(शोर शराबा और मारपीट'''पुलिस भी बीच में आई हुई मालूम पड़ती है)

दरोगा : पकड़ो बदमाशों को'''मार'''इसे मार'''पकड़ो इसे।

हिरामन : दरोगा साहब, मारते हैं मारिए'''कोई हर्ज नहीं'''लेकिन यह पास देख लीजिए'''एक पास पाकिट में भी है, देख सकते हैं हुजूर'''

दरोगा : मारपीट करेगा और पास दिखाएगा बदमाश'''

हिरामन : हम लोगों के सामने कम्पनी की औरत को कोई बुरी बात कहे तो कैसे छोड़ देंगे ?

दरोगा : सुन रहे हैं मैनेजर साहब'''इन्हीं लोगों ने मारपीट शुरू की'''

मैनेजर : नहीं-नहीं हुजूर'''ये लोग तो हीराबाई के आदमी हैं'''यह सारी बदमाशी मथुरा मोहन कम्पनी वालों की है'''ये लोग हीराबाई के आदमी हैं'''इन्हें छोड़ दीजिए'''

दरोगा : ठीक है''' (ऊंची आवाज में) आप सब लोग शांति से बैठ जाइए'''बैठ जाइए'''

मैनेजर : अभी खेल फिर शुरू होगा'''

दरोगा : बदमाशी करने वाले भाग गए'''बैठिए

(फिर नगाड़े की आवाज़ और गुलबदन नाटक के सवाद। जिसमें मारे गए 'गुलफ़ाम' का ज़िक्र आता है। धीरे धीरे विलयन···)

(अन्तराल)

(दूर पर मेले का शोर···हलका-हलका)

हिरामन : पलटा! आज दस दिन हो गए···मेला भी उखड़ रहा है···शाम होते ही नौटंकी का नगाड़ा कानों में बजने लगता है···और हीराबाई की पुकार कानों में मंडराने लगती है···भैया, मीता, हिरामन···उस्ताद गुरुजी!

पलटदास : सब बीत गया भैया···

हिरामन : ऐसा लगता था नौटंकी में, कि हीराबाई शुरू से ही टुकटुकी लगाकर हमारी तरफ़ देख रही है···(गहरी सांस लेता है) मैंने तो अपने रुपए भी हीराबाई के पास रखा दिए हैं···नहीं तो यहां क्या ठिकाना···उनके पास हिफ़ाज़त से रखे रहेंगे···

पलटदास : ठीक किया···पर हिरामन लीला बड़ी बढ़िया है हीरा-देवी की। (दार्शनिक ढग से) किस्सा और क्या होगा? रमैन की ही बात है। वही राम, वही सीता, वही लखनलला और वही राबन।

हिरामन : सो कैसे?

पलटदास : सिया सुकुमारी को राम जी से छीनने के लिए रावन तरह-तरह के रूप धर कर आता है···राम और सीता जी भी रूप बदल लेते हैं···कैसे? यहां भी तख्तहज़ारा बनाने वाला माली का बेटा राम है···गुलबदन सिया सुकुमारी है, माली के लड़के का दोस्त लखनलला है और सुलतान राबन है।

हिरामन : हां, ऐसा ही है···हमारे तो बस एक गीत की आधी कड़ी हाथ लगी है···मारे गए गुलफ़ाम, अजी हां, मारे

गए गुलफाम।

पलटदास : अब तो उखड़ गया मेला भाय।

हिरामन : आज तीन लदनी की मैंने।

पलटदास : लालमोहर अभी लदनी से नहीं लौटा ?

हिरामन : हुं···हुं···

पलटदास : उसकी बात सुनी लहसुनवा की···

हिरामन : भागवान है लहसुनवा जो नौटंकी में नौकरी मिल गई···

पलटदास : गाड़ीवानी में क्या पाता ? कल आया था तो कह रहा था···तुम्हारे अकबाल से खूब मौज में हूं। हीराबाई की साड़ी धोने के बाद कठौते का पानी अतर गुलाब हो जाता है···

(दूर पर बैलगाड़ी का स्वर)

लालमोहर : (दूर से बैलगाड़ी के ऊपर से) हिरामन···ए हिरामन भाय।

हिरामन : क्या लादकर आया है लालमोहर···

लालमोहर : तुमको ढूंढ़ रही है हीराबाई, इसटीशन पर। जा रही है। हमारी ही गाड़ी से गई थी इसटीशन।

हिरामन : (उत्सुकता से) जा रही है ? कहां ? रेलगाड़ी से जा रही है लालमोहर ?

लालमोहर : हां ! जल्दी चल···तुम्हें खोज रही थी···

(फुर्ती से लालमोहर और हिरामन का जाना, गाड़ी तेज जाती हुई, आवाज दूर होती जाती है)

(क्षणिक अन्तराल)

(स्टेशन के प्लेटफार्म का वातावरण)

हीराबाई : उस्ताद ! लो ये थैली···

हिरामन : क्या है ?

हीराबाई : जो रुपए तुमने रखाए थे···लो···हे भगवान···भेंट हो गई, चलो, मैं तो उम्मीद खो चुकी थी···तुमसे अब भेंट नहीं हो सकेगी···मैं जा रही हूं गुरुजी !

(दूर पर ट्रेन आने का स्वर)

हीराबाई : हिरामन···मैं लौट कर जा रही हूं मथुरा मोहन कम्पनी में। अपने देश की कम्पनी है···बनैली मेला आओगे न ?

हिरामन : (गहरी सांस लेता है)

हीराबाई : ये कुछ रुपए और रख लो···समझे···एक गरम चादर खरीद लेना···

हिरामन : (बेहद उदास और रूखे स्वर में) इस्स ! हरदम रुपया ···पैसा ! रखिए रुपैया···क्या करेंगे चादर ?

हीराबाई : (दुखी स्वर में) तुम्हारा जी बहुत छोटा हो गया है, क्यों मीता ? महुआ घटवारिन को सौदागर ने खरीद जो लिया है गुरु जी··· (गला भर आता है)

(ट्रेन आकर रुकती है, शोर बढ़ता है)

हीराबाई : अच्छा मीता !

हिरामन : (बुदबुदाकर) अ···च···छा···। (सांस जैसे घुटती है)

लालमोहर : (धीरे से) बाहर निकल चलो हिरामन···टीशन की बात, रेलवे का राज है भाय।

हिरामन : चलता हूं।

(ट्रेन की सीटी और छूटना···और इंजिन की निकलती सांस के साथ हिरामन के हृदय से निकली गहरी सास घुलमिल जाती है। गाड़ी धीरे-धीरे दूर हो जाती है···)

हिरामन : सब खाली हो गया लालमोहर··· (क्षण भर बाद) तुम कब तक लौट रहे हो गांव ?

लालमोहर : अभी गाव जाकर क्या करेंगे ? यही तो भाड़ा कमाने का मौका है। हीराबाई चली गई, अब मेला टूटेगा···

हिरामन : (टूटी हुई आवाज़ में) अच्छी बात, कोई सवाद देना है घर ?

लालमोहर : अभी घर मत जाओ हिरामन ! यही तो कमाने के दिन हैं, लदनी के···समझा ?

हिरामन : (गाड़ी पर चढ़कर) नही लालमोहर···अब घर जाऊंगा···

लालमोहर : मेरी बात मानो···

हिरामन : अब क्या धरा है मेले में···खोखला मेला···चल भैयन!

(दुआली से बैलों को हांकता है। गाड़ी के चलने की आवाज़)

हिरामन : अब···अब···वोरे भी नही, बास भी नही, परी··· देवी···मीता···हीरादेवी···मछुआ घटवारिन···कोई नही···और अब तीसरी कसम भी उठा लूं···कम्पनी की औरत की लदनी बद···हां···कम्पनी की औरत की लदनी बंद···

(गाड़ी के चलने का स्वर ऊपर उभरता है··· मैदानों मे लहलहाते खेतो पर से भटकती हवा··· सूना उदास वातावरण···और उसी उदासी में हिरामन का दर्द से बोझिल स्वर उभरता है···)

हिरामन : (गाते हुए) अजी हां···मारे गए गुलफाम···अजी हां···

(···उदासी के वातावरण में स्वर डूबता जाता है···गाड़ी की आवाज़ भी उसी के साथ विलीन हो जाती है।)

(फेड आउट)

अवधि : 40 मिनट

रूपान्तर

बिंदो का बेटा

[यह मूल कथा शरत चन्द्र की है। रेडियो रूपांतर एक अत्यंत महत्वपूर्ण रेडियो विधा है। ज्यादातर महत्वपूर्ण साहित्यिक रचनाओं के रूपांतर ही किए जाते हैं और चूंकि यह रचनाएं प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित साहित्यकारों की होती हैं, इसलिए इनकी रचनात्मकता को अखण्डित रखना पहली शर्त होती है। अवधि का बंधन रेडियो का एक जरूरी बंधन है—यानी किसी भी साहित्यिक कृति को समय की सीमा में भी बांधना पड़ता है। मूल आत्मा को सुरक्षित रखते हुए, समय सीमा को निभाते हुए जब रूपांतर करना पड़ता है, तो समस्या सचमुच कठिन होती है। किसी भी कृति को एक मौलिक रेडियो रूप देना पड़ता है—और वह तब, जबकि मूल कृति की पहचान पहले से ही स्थापित होती है। इस टेढ़े और नाजुक काम को कैसे संपन्न किया जाता है—यह मूल कृति और उसके रूपांतर को सामने रखके ही समझा जा सकता है]

(सुबह का समय है। रसोई में अन्नपूर्णा भोजन की व्यवस्था कर रही है। मिसरानी की आवाज़ सुनाई देती है'''बड़ी बहू, इतना चावल भिगो दूं ?' कदम पूछती है—'मालकिन, तरकारी क्या बनेगी ? बता दें तो काट लूं—तभी बिन्दुवासिनी बाहर से पुकारती है)

बिंदु : जीजी ! अमूल्यधन पांव छूने आया है। ज़रा बाहर आओ।

अन्नपूर्णा : ओ हो ! बड़े ठाठ हैं ! आंखों में काजल, माथे पर टीका, गले में सोने की जंजीर, पीली धोती, हाथ में दावात, बग़ल में तख्ती'''तेरा बेटा तो एकदम विद्यार्थी लग रहा है छोटी बहू !

बिंदु : आज इसे गगा पण्डित की पाठशाला भिजवा रही हूं। जीजी के पांव छुओ बेटा।

अन्ना : जीते रहो। खूब पढ़ो-लिखो।

बिंदु : हां जीजी, यही आशीष दो कि आज का दिन इसके जीवन में सार्थक हो।'''और हां, यह लो पांच रुपए। अच्छी तरह सीधा लगाकर और उसमे ये रुपए रखकर कदम के हाथ पंडित जी के पास भिजवा दो।'''चल बेटा, देर हो रही है। (लौटते हुए) भैरों ! पंडित जी से मेरा नाम लेकर खास तौर पर कह देना कि मेरे *बेटे को कोई मारे-पीटे नहीं।*

अन्ना : (बिन्दु के चले जाने पर भीगे स्वर मे) इसे अपने बेटे

से ही फुरसत नहीं। हर समय उसी के काम में उलझी रहती है।

कदम : (जो बातें सुनने के लिए चावल बीनती हुई कोने में खड़ी हो गई थी) अपना-अपना सुभाव है बहूजी। एक होती है जो जिठानी के बच्चो से ऐसा बैर साधती है कि बाप रे बाप; देखा नही जाता। एक ये हैं कि पिरान देती हैं!

विंदु : (कुछ चिन्तित-सी आती है) जीजी! जेठजी से कहके क्या अपने मकान के सामने एक पाठशाला नहीं खुलवाई जा सकती? खर्च मैं सब अपने पास से दे दूंगी!

अन्ना : (हसते हुए) अभी दो कदम तो बेटा गया नही छोटी बहू, इतने ही में तू घबराने लगी? न हो, तू भी साथ चली जा। पाठशाला में जा के बैठी रहना उसी के साथ···

विंदु : तुम तो हसती हो जीजी, मगर उसके साथ के शरारती लड़के अगर छोटा पाकर उसे मारें-पीटें, तब?

अन्ना : तब क्या! लड़के मार-पीट किया ही करते हैं। अगर दूसरों के मा-बाप जी कड़ा करके पाठशाला भेज सकते हैं तो तू क्यों नही भेज सकती?

विंदु : वाह! मान लो कोई उसकी आंख में कलम चुभो दे? कोई ··

अन्ना : तब डॉक्टर को दिखा देना। पर सच कहती हूं री, मैं तो सात दिन भी बैठ के सोचती तो भी यह आंख में कलम चुभोने की बात मेरे दिमाग में नही आती। आखिर इतने लड़के लिखते-पढते हैं···यह तो कभी नहीं सुना कि किसी ने किसी की आख मे कलम चुभो दी हो!

बिंदु : वाह! तुमने नही सुना तो क्या यह हो ही नही सकता? तुम जेठजी से एक बार कहके देखो तो सही;

उसके बाद जो होगा सो देखा जाएगा।

अन्ना : अरे जो होगा, वो तो साफ दिखाई देता है। तूने ठानी है तो क्या बात बिना पूरी किए तू छोड़ेगी ! तू भी तो उनसे बोलती है, जा कह न आ !

बिंदु : कहूंगी तो जरूर। इतनी दूर रोज़-रोज़ मैं अपने बेटे को नहीं भेज सकती, चाहे किसी को बुरा लगे, चाहे भला।

अन्ना : अरे तो चल न, बाबा; मना कौन करता है ? मैं ही कहे देती हू !

[बाहर जाने का आभास, बाहर से दोनों जैसे कमरे में आती हैं। यादव बैठे हुक्का पी रहे है। हुक्के की गुड़-गुड़ाहट का स्वर]

अन्ना : सुनते हो···

यादव : क्या बात है ?

अन्ना : छोटी बहू कुछ कहना चाहती है।

यादव : छोटी बहू ? क्यो बहूरानी, क्या है ?

अन्ना : बोल बिंदो···बोल न···नही बोलती···वो बात यह है कि बिंदो को लगता है पाठशाला में कही कोई लड़का इसके बेटे की आंख में कलम न भोंक दे ··इसलिए मकान ही में एक पाठशाला खुलवा देने की बात कहती है ये ! कही आख में कलम भोंक दिया···

यादव : ऐं। आंख में कलम भोंक दिया ! कहां है, देखूं !

अन्ना : देखोगे क्या ! अभी तो वह ठीक है ! अगर 'कोई भोंक दे तो' की बात हो रही है !

यादव : ओह ! 'अगर भोंक दे तो' की बात है ! मैं तो घबड़ा गया कि सचमुच···

बिंदु : जीजी, रहने भी दो···मैं जो कहना चाहती थी वह खुद ही कह देती तो अच्छा होता !

अन्ना : अरे बाबा, मेरी बीच मे बड़ी मुश्किल है ! मैंने कहा क्या, और तुमने सुना क्या ! पूछ रहे हैं 'कहां है, देखूं !'

मैंने क्या यह कहा कि किसी ने उसकी आंख फोड़ दी है ?

यादव : अरे भई, तो ठीक से बताओ न क्या हुआ ?

अन्ना : जो हुआ सो अच्छा हुआ। मैं अब से तुम लोगों के बीच मे कुछ बोला ही नहीं करूंगी।

(कहती हुई कमरे से जाने का आभास)

यादव : क्या बात है बहूरानी ? मुझे बताओ···

बिंदु : जी, अगर अपने यहां एक पाठशाला खुल जाती तो···

यादव : पाठशाला ? यह कौन बड़ी बात है ? जरूर खुल आएगी। मगर···उसमें पढ़ाएगा कौन ?

बिंदु : उसका प्रबन्ध तो आसानी से हो जाएगा। पंडित जी आए थे, कह रहे थे कि अगर महीने मे दस रुपए मिल जाया करें तो वे अपनी पाठशाला यहीं उठा लाएंगे। इसमें जो कुछ लगेगा वह मैं दे दूंगी।

यादव : (हंसते हुए) अच्छा-अच्छा ! सो तो सब तुम्हारा ही है। तुम तो मेरे घर की लक्ष्मी हो !

(अन्तराल—संगीत से)

कदम : अरी मैया री ! उनका तो···(सहसा बिन्दु को देखकर चुप हो जाती है)

बिंदु : अरी मैया क्या ?···बोल···कहती क्यों नहीं कदम ? क्या कह रही थी ?

कदम : मैं ! मैं कह रही थी छोटी बहू कि···कि बड़ी बहू, बड़ी बहू कह रही थी न···कि क्या नाम···

बिंदु : बेकार की बातें तुझे खूब आती हैं। चल, अपना काम कर !

(कदम 'अच्छा, अच्छा' करती भाग जाती है)

बिंदु : बडी जीजी ! आपके सलाहकार भी खूब हैं ! जेठजी से कहकर इनकी तनख्वाह बढ़वा देनी चाहिए !

अन्ना : जा न ! कह आ जाकर। तेरे जेठजी क्या मेरा सिर

उतरवा लेंगे ? देखते ही शुरू कर देंगे—'क्या है बहूरानी···बिल्कुल ठीक कहती हो। ऐसा ही होना चाहिए। दुनिया में कोई समझदार है तो मेरी बहू।' ···मैंने बहुत-से भाग्यशाली देखे बिन्दु, पर तेरी जैसी तक़दीर किसी की नही देखी। घर में सभी तेरे डर से कांपते हैं !

बिंदु : (प्यार के साथ) कहां ! तुम तो नहीं डरतीं !

अन्ना : मैं नही डरती ? अब यह तो मेरा ही जी जानता है। मगर छोटी बहू, इतना गुस्सा अच्छा नही। तेरे जेठजी ने दुलार कर-करके तेरा दिमाग खराब कर दिया है ?

बिंदु : तकदीरवाली हूं न···यह तो बिल्कुल ठीक कहती हो। धन-दौलत, लाड़-प्यार बहुतों को मिलता है पर ऐसे देवता-से जेठ पाने के लिए पूर्व जन्म की तपस्या चाहिए। मेरा भाग्य है जीजी, तुम डाह करके क्या करोगी ? रही लाड़ करके सिर फिराने की बात; सो तो तुम्हीं ने किया है !

अन्ना : मैंने ? देखो इसकी बातें ! जानती है, मैं बहुत सख्त हूं···मगर तकदीर खोटी है जो कोई रौब ही नहीं मानता। नौकर-चाकर तक बराबरी का दावा रखते हैं।

बिंदु : (गले मे हाथ डालकर) हाय बिचारी मेरी जीजी ! कोई कहानी सुनाओ न !

अन्ना : अरी चल हट !

(कदम भीतर से भागी हुई आती है)

कदम : छोटी बहू, अमूल्यधन ने सरौते से हाथ काट लिया। वहीं बैठा रो रहा है।

बिंदु : सरौता मेरे कमरे में कहां से आ गया ? तुम सब क्या कर रही थी ?

कदम : मैं तो बिछौना बिछा रही थी, न जाने कब वह बड़ी

बहू के कमरे में जा पहुंचे—

विंदु : अच्छा सुन लिया। खूंटी पर सफ़ेद धोती टंगी है; जल्दी से उसमें से पट्टी फाड़कर ले आ।
(विंदु जाती है)

(पाज़)

(अन्नपूर्णा तरकारी काट रही है)

विंदु : लहू-लोहान हो गया। कितनी बार कहा कि बाल-बच्चों का घर ठहरा, सरौता-अरौता जरा सम्हालकर रख दिया करो। मगर किसी को परवाह हो तब तो!

अन्ना : तू तो बिल्कुल हवा में तीर मारती है छोटी बहू। इस डर से कि तेरा बेटा कमरे में घुसकर हाथ न काट ले, क्या सरौते को तिजोरी में बन्द कर देती?

विंदु : ठीक है। कल से उसे रस्सी बांध दिया करूंगी। फिर तुम्हारे कमरे मे नहीं घुसेगा!

अन्ना : मेरा क्या है, जो जी मे आए सो कर। तू ही बता कदम, यह इसकी ज्यादती है कि नहीं?

विंदु : देखो जीजी, फिर कभी तुमने किसी नौकर-नौकरानी को पंच बनाया तो सच कहती हूं, उसी दिन अमूल्य को लेकर मैं मायके चली जाऊंगी।

अन्ना : हां-हां, चली जा। मगर याद रखियो कि सिर पटक के मर जाएगी तो भी फिर बुलाने का नाम नहीं लूंगी!
(अन्नपूर्णा उठकर चली जाती है। कदम तरकारी उठाकर पीछे हो लेती है।)
(अंतराल)
(विंदु अमूल्य को कहानी सुनाने लगती है तभी माधव आता है)

विंदु : एक थी रानी। उसके बगीचे में एक आम का पेड़ था। उस पर दो नन्ही-नन्ही, प्यारी-प्यारी चिड़िया रहती थीं। एक दिन चिरौटा बोला···

माधव : ओहो ! आज मां-बेटे में बड़ी चुपके-चुपके बातें हो रही है !

विंदु : (हंसकर) तुम्हें क्यों अखर रहा है ?

माधव : भई मुझे क्यों अखरने लगा ? मेरे लिए तो अच्छा है। तुम तो जानती ही हो कि मेरा ठहरा दिमाग का काम। अगर बराबर उसमें बाधा पड़ती रहे तो चल नहीं सकता !

विंदु : यानी कि मैं तुम्हारे काम की बाधा हूं ?

माधव : अकलमन्द के लिए इशारा काफ़ी है !

विंदु : ठीक है ! अमूल्य, हम लोग भी किसी से बात नहीं करेंगे। हां, तो एक दिन चिरौटा बोला, अमूल्य कि आज हमारा खिचड़ी खाने को मन है ?

विंदु : बिल्कुल ठीक ! बस, फिर चिड़ियां चावल ले आई और चिरौटा ले आया दाल !

(अन्नपूर्णा की आवाज़ छोटी बहू !)

अन्ना : चल, खाना खा ले ! (आकर)

विंदु : मुझे भूख नही है !

अमूल्य : बड़ी मां ! छोटी मां को भूख नही है, तुम जाकर खा लो !

अन्ना : तू चुप रह ! ज़रा-सा लड़का, हर बात मे टांग अड़ाता है। तू ज्यादा लाड़-प्यार करके इसे बिगाड़ रही है··· पीछे पता चलेगा !

अमूल्य : (बिन्दु के सिखाने पर) जीजी, तुम तो समझती ही नही हो ! कह तो दिया कि छोटी मां को बिल्कुल फ़ुरसत नही है। वह हमें कहानी सुना रही हैं। (बिंदु की फुसफुसाहट पर बोलता है)

अन्ना : भला चाहती है तो उठ आ छोटी बहू, वरना कल तुम दोनो को यहा से विदा न कर दिया तो कहना !··· बहुत सताते हो तुम लोग मुझे···

(अन्ना चली जाती है)

माधव : (हंसकर) आज भाभी को क्यों नाराज़ कर दिया ?

बिंदु : जी हां ! मैंने नाराज़ कर दिया ? उनसे सिर्फ यह कहा था कि बाल-बच्चों का घर ठहरा, सरौता-अरौता सम्हालकर रखा करें; इसी का बुरा मान गई। लड़के का हाथ कट गया सो कुछ नहीं !

माधव : अब तुम जल्दी से चली जाओ वरना भाभी जैसे धमा-धम चल रही हैं उससे अभी भइया की आंख खुल जाएगी।

बिंदु : जाती हू बाबा··· (बिन्दु हंसती हुई अमूल्य को लेकर चलती है) चल अमूल्य···

(अंतराल)

(यादव बैठे चाय पी रहे हैं। पास ही अन्नपूर्णा और बिन्दु बैठी हैं)

यादव : तुम्हारा मकान तो बन गया बहूरानी। अब किसी दिन चलकर देख लो कि कुछ कसर तो नहीं रह गई !

बिंदु : जी नहीं। आपकी देखरेख मे बना है फिर भला क़सर कैसे रह जाएगी ?

यादव : (हंसकर) बिना देखे ही राय दे दी बहूरानी ? अच्छा, ठीक है। बड़े भाग्य से यह दिन आता है जब सगे-सम्बन्धी ऐसे मौकों पर अपने घर आते हैं। एलोकेशी तो नरेन्द्र को लेकर आ ही गई है, और सब भी दो-चार दिन मे पहुंच जाएगे। किसी अच्छे पण्डित से पूछकर गृह-प्रवेश की साइत निकलवा लें। क्यों, ठीक है न ?

बिंदु : जैसा जीजी ठीक समझें !

यादव : सो तो है मगर तुम इस घर की लक्ष्मी हो, सब कुछ तुम्हारी ही इच्छा से होगा।

अन्ना : अगर कहीं तुम्हारी लक्ष्मी-बहू ज़रा शान्त होती तो…

यादव : नहीं, नहीं ! वह तो देवी है। वर भी देती है और समय पड़ने पर क्रोध भी करती है। देखती नहीं, जब से उसने इस घर में पैर रक्खा है, सारे दुख-दरिद्र दूर हो गए।

अन्ना : सो तो ठीक है। क्यों लक्ष्मी देवी ?

(दोनों एक-दूसरे को देखकर जैसे हंसती हैं। दोनों की हसी)

विंदु : (धीरे-से) जीजी ! तुम बडी खराब हो !

(एलोकेशी और नरेन्द्र के आने का आभास)

यादव : आओ, आओ नरेन्द्र। अब तुम लोग बैठकर वातें करो। मैं तब तक कुछ ज़रूरी चिट्ठियां लिख डालूं।…कुछ चाय-वाय पी एलोकेशी…

अन्ना : क्या कर आई बीबी जी ?

एलो० : कुछ नहीं। घूम-फिरकर तुम्हारे घर का मुआइना कर आई भाभी…

विंदु : नरेन्द्र, तुम किस क्लास में पढ़ते हो बेटा ?

नरेन्द्र : (सगर्व) फोर्थ में ! बहुत पढना पड़ता है मामी ! अंग्रेज़ी, ग्रामर, ज्योगरफी, अरिथमेटिक और उसमें भी डेसिमल, टेसिमल न जाने क्या-क्या ! वह सब तुम समझोगी नही मामी !

एलो० : अरे एक-आध किताब थोड़े ही है छोटी वहू ! किताबों का पहाड़ है, पहाड़। कल किताबें निकालकर अपनी मामियों को दिखा देना, बेटा !

नरेन्द्र : अच्छा। अभी ले आऊं ?

विंदु : नही-नही, बैठो। तुम्हारा रिजल्ट कब आ रहा है नरेन्द्र…

एलो० : रिजल्ट ! अरे अब तक तो भाभी, ठाकुर जी महाराज झूठ न बुलवाएं, ये दस किलास पास कर चुका होता, मगर इसके मास्टर ऐसे वैरी हैं कि बेचारे को बार-

बार फेल कर देते हैं। और तुम जानो, पढ़ने-लिखने में ही तेज नहीं है, थियेटर में तो ऐसा बोलता है, मेरा नरेन्द्र···ऐसा बोलता है, ऐसा एक्टिंग करता है कि बस कुछ पूछो मत! जरा वह सीता वाला पार्ट करके दिखा, बेटा!

नरेन्द्र : (घुटने टेककर, ऊंचे नाक के सुर में बोलता है) प्राणेश्वर! दासी को कैसे असमय में त्याग दिया आपने?

बिंदु : अरे चुप रह। चुप रह! जेठजी घर में हैं!

अन्ना : अरी सुन लेंगे तो सुन लें! यह तो ठाकुर जी की कथा है!

बिंदु : तो तुम्हीं सुनो ठाकुर जी की कथा!

नरेन्द्र : अच्छा तो रहने दो! मैं शकुन्तला का पार्ट करता हूं—'दुष्यन्त! आज मैं कितनी सुखी हूं! मैंने सब कुछ पा लिया। लेकिन राजमहल लौटकर तुम मुझ अभागिन को भूल तो न जाओगे?

एलो० : देखा! अहा! अहा! इसके गले में ग़ज़ब की मिठास है! बेटा, जरा वह भी सुना न जो दमयन्ती ने रोते हुए गाया था···

नरेन्द्र : वह! हां—'मुझको जंगल में क्यों तुमने छोड़ा!
हाय, मैं बन गई पथ का रोड़ा'!!

अन्ना : (बिंदु का चेहरा देखकर) बस-बस, यह गाना-बजाना अभी रहने दो! जिस दिन मर्द घर में न रहें, उसी दिन सुनाना!

नरेन्द्र : वह गाना मैं अमूल्य को सिखा दूंगा। मुझे बजाना भी खूब आता है···त्रेटेक ताक···त्रेटेक ताक! अमूल्य, कोई पीतल का बर्तन उठा ला तो बजाकर दिखाऊं।

बिंदु : उसे सिखाना बड़ा मुश्किल है बेटा! अमूल्य···तू दिन भर खेलता ही रहेगा? पढ़ता क्यों नहीं जाकर?

अमूल्य : अभी नहीं छोटी मां। बड़ा अच्छा लग रहा है !

बिंदु : तू चल तो''' (बिंदु उसे पकड़कर ले जाती है)

अन्ना : बेटा नरेन, तुम छोटी मामी के सामने ये ऐक्टिंग-फेक्टिंग न किया करो !

एलो० : क्यों ? क्या छोटी बहू को ये सब बातें अच्छी नहीं लगतीं ? क्या इसीलिए वह उठकर चली गई ?

अन्ना : शायद ! और बेटा, तुम खूब मन लगाकर लिखो-पढ़ो, जिससे तुम्हारी मा का दुःख दूर हो ! इन खेल-तमाशों में क्या रक्खा है ! और देखो, अमूल्य के साथ ज्यादा मिलना-जुलना नहीं; वह बच्चा है ! ना-समझ है !

एलो० : हां भई, गरीब के लड़के को गरीब की तरह ही रहना चाहिए। मगर यह तो जरूर कहूंगी भाभी, कि तुम्हारा बेटा दूध-पीता बच्चा है तो मेरा नरेन ही कौन-सा बूढ़ा हो गया है ? क्या इसने बड़े आदमियों के बेटे देखे नहीं ?

अन्ना : नहीं बीबीजी, मेरा यह मतलब नहीं था।

एलो० : और क्या मतलब था ? मैं क्या बेवकूफ हूं कि इतनी बात भी नहीं समझ सकती ? वह तो भइया ने कहा था कि नरेन यहीं रहकर पढ़ेगा, सो उसे ले आई वरना वहां भी हम लोगों के दिन कट ही रहे थे !

अन्ना : भगवान साक्षी हैं, बीबीजी, मैंने यह नहीं कहा !

एलो० : अच्छा जो कहा सो ही बहुत है। नरेन बेटा, तू बाहर जाकर बैठ। यहां बड़े लोगों के बेटे से मिलना-जुलना नहीं। चल, उठ।

(अंतराल)

(संगीत उभरता है)

(बिन्दो सामने कुछ गंदे कपड़े रक्खे बैठी है। अन्नपूर्णा उसे पुकारती हुई आती है)

अन्नपूर्णा : छोटी बहू···अरे !···धोबी आया है क्या ? कैसी खोई-खोई-सी बैठी है !···बोलती क्यों नहीं ?

विंदु : ये देखो, सिगरेट के टुकड़े। अमूल्य के कुरते की जेब से निकले हैं। (रोकर) तुम्हारे पैरों पड़ती हूं जीजी, उन लोगों को विदा कर दो या हम लोगों को ही कहीं भेज दो। इस तरह लड़के को बरबाद होते मैं नहीं देख सकती !

अन्नपूर्णा : (कुछ क्षण अवाक् रहने के बाद) जो भी हो बिन्दू, है तो वह तेरा ही लड़का; इस बार तू उसे माफ कर दे।

विंदु : मेरा लड़का नहीं है, यह बात मैं भी जानती हूं और तुम भी जानती हो; फिर झूठ मूठ बात बढ़ाने की क्या जरूरत है जीजी !

अन्नपूर्णा : मैं नहीं, तू उसकी मां है। मैंने तो नन्हा-सा ही तेरी गोद मे दे *दिया था* !

विंदु : जब तक छोटा था, मेरी गोद मे पला, अब बडा हो गया है। अपना लडका सम्हालो और मुझे मुक्ति दो !

(कदम बाहर से आती है)

कदम : बहूरानी, लल्ला के मास्टर साहब आए हैं।

विंदु : भीतर बुला ला।

अन्नपूर्णा : जरा चलकर देखू रसोई मे क्या हो रहा है।

(अन्नपूर्णा भीतर चली जाती है। बाहर से *मास्टर* का प्रवेश)

विंदु : कल से नए मकान में पढाने आइएगा।

मास्टर : जी अच्छा ! (जाने लगता है)

विंदु : अमूल्य का आजकल पढना लिखना कैसा है ?

मास्टर : पढने लिखने में तो वह बराबर ही अच्छा रहा है। हर साल प्रथम आता है।

विंदु : सो तो आता है, मगर आजकल बड़े गुण सीख रहा है। सिगरेट चुरुट पीने लगा है।

मास्टर : सिगरेट पीने लगा है ! ···कोई ताज्जुब नहीं। कच्ची उम्र में लडके देखा देखी यह सब सीख ही जाते हैं।

बिंदु : इसने किसकी देखा-देखी यह सीखा है ?

मास्टर : बड़ी बुरी बात है। अब आप से क्या कहूं, पांच सात दिन पहले इन लोगों ने एक माली के बगीचे में घुसकर कच्ची अंबियां तोड़ीं, पेड़ पौधे उखाड़े और उसकी खूब मरम्मत की ।\

बिंदु : फिर ?

मास्टर : फिर माली ने हेडमास्टर से शिकायत कर दी। उन्होंने दस रुपये जुरमाना करके उसे दिया, तब वह शान्त हुआ।

बिंदु : मेरा अमूल्य भी उनमें था ? मगर रुपये उसने कहां से पाए ?

मास्टर : जी, यह तो नहीं मालूम; मगर था वह भी। साथ में नरेन्द्र बाबू थे, और भी स्कूल के चार पांच बदमाश लड़के थे !

बिंदु : रुपये वसूल हो गए ?

मास्टर : यही सुना है।

बिंदु : अच्छा आप जाइए।

मास्टर : नमस्कार

बिंदु : नमस्कार ! ···

(मास्टर चला जाता है)

बिंदु : तो बात यहां तक पहुंच गई।···जीजी ! ···जीजी (पुकारती है)

अन्नपूर्णा : (दूर से)···आई···क्या है ?

बिंदु : जीजी, इस बीच मे अमूल्य को तुमने रुपये दिए थे !

अन्नपूर्णा : कौन कहता था ?

बिंदु : कोई कहे न कहे, सवाल तो यह है कि उसने क्या कहकर लिए और तुमने रुपये क्या समझकर दिए। तुम नहीं

चाहती कि उस पर मैं किसी भी तरह की सख्ती करूं इसीलिए मुझसे छुपाकर तुमने रुपये दे दिए ! झूठ वह नही बोला होगा, इतना मैं जानती हूं। बताओ तुमने सारी बात जानते हुए भी रुपये दिए थे न ?

अन्नपूर्णा : हां। लेकिन इस बार तू उसे माफ कर दे बहिन !

बिंदु : इस बार ही क्यो, अब उसे हमेशा के लिए माफ करती हूं। मैं यह नहीं देख सकती कि वह मेरी आंखों के सामने बिगडता चला जाए। इसमे तो यही अच्छा है कि मैं उससे दूर हट जाऊं। किसी बात की कोई शिकायत नही करूंगी, उससे बात तक नही करूंगी ! अब तुम्हें उसे माफ कर देने के लिए वकालत नही करनी पड़ेगी ! सच पूछो तो दोप उसका इतना नही, जितना तुम्हारा है ! तुम्हें मैं कभी क्षमा नही कर सकूंगी।

अन्नपूर्णा : तो क्या करेगी ? फांसी चढा देगी। मेरी यही गलती है न कि अपने लडके को दो रुपये दे दिए ?

बिंदु : पर दिए क्यों ?

अन्नपूर्णा : तू बड़े बाप की बेटी है न, इसी से सोचती है कि दूसरों की दो रुपये खर्च करने की भी हैसियत नही है !

बिंदु : उसका घमन्ड मुझे नही है। मगर सोचकर देखो कि एक पैसा भी जो देती हो, सो किसका देती हो ?

अन्नपूर्णा : ओह ! हम लोग तेरे पति की कमाई पर पल रहे हैं यही तू कहना चाहती है ! इतने दिनों से मन में यह बात छुपाए क्यों बैठी रही छोटी बहू···कहां थी तू तब—जब छोटे भाई को पढ़ाने की खातिर इन्होने कभी एक साथ दो धोती तक खरीद कर नहीं पहनी।

कहां थी तू तब—जब भाई को फीस जुटाने के लिए ये उपोस रहकर भी दिन काट देते थे। इन्हें अगर तुम लोगों के मन की बात पता होती तो इस तरह आराम से हुक्का पी-पी कर दिन न काट सकते। आज तूने मेरे

वहाने इनका अपमान किया है। मुझे भी कसम है आज से—चाहे किसी के घर रसोई बनाके पेट पाल लूंगी मगर तेरे अन्न को हाथ नही लगाऊंगी ! जानती है आज तूने किया क्या है ? उस देवता का अपमान किया है···! हां···

(तभी यादव किसी काम से वहां आकर पुकारते हैं)

यादव : बड़ी बहू !

अन्नपूर्णा : छि: छि: जो आदमी अपने बेटे और पत्नी को खुद कमाकर नही खिला सकता, उसे क्या गले में फांसी लगाने के लिए रस्सी भी नही जुटती ?

यादव : क्यों, क्या हुआ ?

अन्नपूर्णा : तुम्हारे जीते जी मुझे यह सुनना पड़ा कि हम लोग इनके अन्न पर पल रहे हैं, कि इस घर में एक पैसा भी खर्च करने का अधिकार हमारा नहीं। मैं तुम्हारे सामने सौगन्ध लेती हू कि इन लोगो का अन्य खाऊ तो मेरे बेटे का अमंगल हो !

यादव : वड़ी वहू !

बिंदु : (धीरे से) जीजी ! यह क्या किया तुमने ! जीजी···

अन्ना : अरे···ये क्या हुआ तुझे ? छोटी वहू···बिंदो···बिंदो ···(यादव से) जरा देखो तो इसे···

यादव : तुम संभालो छोटी बहू को···लगता है बेहोश हो गई ···मैं पानी लाता हूं···

(कहते हुए जाने का आभास)

(अंतराल)

(शहनाई बज रही है। पंडित जी के मन्त्रोच्चार के स्वर, घर में खूब चहल-पहल होने का आभास। कही दही की मांग है, कही मिठाई की, कोई घी

मांग रहा है, कहीं 'तरकारी कट गई' की आवाजें)

बिंदु : देर हुई जा रही है। पुरोहित जी कई बार पूछ चुके। जेठ जी अभी तक आए नही !

माधव : वे क्यो आएगे ?

बिंदु : क्यों आएंगे ? उनके सिवा गृह-प्रवेश की पूजा कौन करेगा ? वही तो घर के बड़े-बूढ़े ठहरे !

माधव : मैं या जीजा जी करेंगे। भैया नही आ सकेंगे।

बिंदु : नही आ सकेंगे, यह कहने से ही तो काम नही चलेगा। उनके रहते हुए क्या किसी को अधिकार है ये सब काम करने का ? नही, नही। उनके सिवा मैं और किसी को कुछ नहीं कहने दूंगी।

माधव : तो रहने दो। वे घर पर नही हैं; काम पर गए हैं। मैंने पता किया था...

बिंदु : तब तो शायद जीजी भी नहीं आएंगी ! अमूल्य भी नही आएगा !

नौकर (आकर माधव से कहता है) मालिक, रमेश बाबू आपको बुला रहे हैं, उनके साथ पड़ोस के और लोग भी है (वह चला जाता है।)

(तभी एलोकेशी आती है।)

एलोकेशी : छोटी भाभी, आटा कितना मड़वाया जाएगा, जरा चलकर बता दो।

बिंदु : यह मैं क्या जानूं। तुम लोग बड़ी बूढी हो, जो चाहो सो करो।

एलोकेशी : सुनो इसकी बातें। मैं चार दिन की आई, भला मुझे क्या पता कितने लोग खाने आएगे।

बिंदु : तो उस घर मे जो वैर साध कर आराम से बैठी हैं; नौकर भेज कर उन्हीं से पुछवा लो! इस काम को हमेशा वही करती थी, उन्होने तो कभी किसी काम में मुझसे

नही पूछा। अमूल्य के जनेऊ मे तीन दिन तक सारे शहर के लोगो ने खाया पिया, मगर मुझे पता भी नही चला कि कहां क्या हो रहा है। आज यह गृह-प्रवेश का चक्कर मेरे गले डालकर वो तो वहां बैठी हैं !

एलोकेशी : तब मैं ही देखती हूं। बड़ी भाभी नखरे किए अपने घर बैठी हैं तो बैठी रहे। यहां किसे परवाह पड़ी है ! मन ही मन खूब जल रही होंगी कि देवरानी का नया आलीशान मकान बन गया।

बुआ जी : माधो की बहू ! तू यहा बैठी है उधर सारी बिरादरी की औरतें जमा हो रही है, ठीक से कपड़े पहन कर आगन मे क्यों नही आती।

विंदो : आप चलिए बुआजी ···मैं अभी आई।

एलोकेशी : भाभी भंडार को चाभी दो तो मिठाई भीतर रखवा दू।

विंदु : बाहर ही किसी कमरे में डाल दो।

बुआजी : अरे, कौवा औवा जूठी कर जाएगा ! नौकर चाकर उठा ले जाएंगे !

बिन्दु : तो उठाकर बाहर फिकवा दीजिए बुआ जी···

कदम : बहूरानी, जीजी जी के पूजा के कपड़े···

बिन्दु : (चिल्लाकर) नही है मेरे पास·· भाग जा यहां से ! सब मिलकर मेरे पीछे पड़ गए है।···क्योरी कदम, भैरो अमूल्य को लेकर अभी तक नही लौटा। वो जहां जाता है वही सो जाता है।

कदम : वह लौट आया बहूरानी।

बिंदु : तब ! अमूल्यधन कहां है ?

कदम : वह घर ही पर थे मगर आए नहीं।

बिंदु : तूने कहा नही कि मैंने बुलाया है ?

कदम : कहा था।

बिंदु : (आहत स्वर में) तब ठीक है। जैसी मां है, वैसा ही बेटा है। मैं ही मूर्ख हूं जो उन पर जान देती हूं।

एलोकेशी : तुम्हें लड़का चाहिए छोटी भाभी तो मेरे नरेन्द्र को ले लो। तुम्हारे इशारों पर नाचेगा। जैसे रखोगी वैसे ही रहेगा। बड़ा होनहार है। बड़ों की बात काटना तो उसने सीखा ही नहीं।

बुआ जी : तुम लोग उसे परेशान मत करो। बिन्दो, तुम्हारा झगड़ा तो दो दिन का है बेटी, इससे क्या लड़का पराया हो जाएगा!

(माधव अन्नपूर्णा को साथ लिए आता है आने का आभास)

माधव : अरे भाई देखो मैं भाभी को ले आया हूं।···

बिंदु : (चाबियों का गुच्छा अन्ना के हाथों में देती हुई बिंदु चली जाती है) लीजिए संभालिए यह इस घर का चाबियों का गुच्छा···

(अन्तराल)

(नया मकान। माधव बैठा अपना काम कर रहा था। बिंदु दबे पांव पास आती है)

बिंदु : काम कर रहे हो···सुनो, मेरा तो इस नए मकान में बिलकुल जी नहीं लगता···(पाज) अच्छा एक बात बताओ। क्या, सचमुच जेठ जी नौकरी करने लगे हैं?

माधव : हां।

बिंदु : हां, क्या 'यह क्या उनकी नौकरी करने की उमर है?

माधव : (काम करते-करते) नौकरी क्या आदमी उमर देखकर करता है? नौकरी करता है जरूरत के कारण।

बिंदु : उन्हें कमी किस बात की है? हम उनके पराए हैं क्या? लड़ाई-झगड़ा हम दोनों में हुआ है, मगर तुम तो उनके भाई हो!

माधव : सौतेला भाई हूं।

बिंदु : तो तुम अपने रहते उन्हें नौकरी करने दोगे?

माधव : क्यों नही करने दूंगा? संसार में सब अपनी-अपनी तकदीर लेकर आते है। मुझे ही देखो। कब मां-बाप चल बसे, मैं नही जानता। भाभी के मुह से सुना है कि हम लोग बहुत गरीब थे, मगर किसी दिन दुःख-कष्ट की छाया तक मुझ पर नही पड़ी। कैसे अच्छे से अच्छे कपड़े बन जाते थे, कहां से स्कूल कालेज का खर्चा, किताबों के दाम, मेस के लिए रुपए जुट जाते थे यह मैं आज भी नही जानता। उसके बाद वकालत शुरू की··· नया वकील होने पर भी कम रुपए नही कमाए। इतने में न जाने कैसे, कहां से तुम आई और अपने साथ ढेर के ढेर रुपए ले आई। धीरे-धीरे हम लोग बड़े आदमी हो गए; आलीशान मकान भी बनवा लिया। मगर भइया! वे चुपचाप हमारी जरूरतें पूरी करने के लिए अपना खून-पसीना एक करते रहे। फटे पुराने, पैबन्द लगे कपडे पहनते रहे, जाड़े तक मे उनके शरीर पर गरम कपडा मैंने नही देखा; खुद एक बार खाते थे, दूसरी बार का खाना बचाकर मुझे खिला देते थे···सारी बातें अब हमे याद ही कहां रह गई और याद रखने की जरूरत भी नहीं। सिर्फ कुछ दिन आराम के पाए थे, सो भगवान मय ब्याज के वसूल किए ले रहे हैं। जैसे कोई कागज़ ढूंढ़ते हुए) और जानती हो, भइया को नौकरी कैसी मिली है? राधापुर की कचहरी तक आने-जाने मे पूरे पांच कोस का चक्कर है। तड़के चार बजे निकल जाते हैं, दिन भर बिना कुछ खाए-पिए काम करते हैं और रात को घर लौटकर दो-चार कौर खाकर पड़ रहते हैं। और तनखा। हमारे पुराने नौकर भी उनसे ज्यादा पाते हैं।

बिंदु : इतने से रुपयो के लिए उन्हें इतनी मेहनत करनी पड़ती है।

माधव : हां! फिर इस उम्र में पाव भर दूध भी पीने को नसीब

नहीं होता।

(पता नहीं भगवान उनकी क्या परीक्षा ले रहे हैं···)

बिंदु : मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूं, कोई उपाय करो कुछ भी करो ···। इस तरह तो वह दो दिन भी नहीं जी सकेंगे ?

माधव : तो मैं क्या करूं ? भाभी हम लोगों के अन्न का एक दाना भी नहीं छूना चाहती। समझ में नहीं आता···वो अपना घर भी कैसे चलाती होंगी···

बिंदु : उसके लिए तो तुम्हें ही कुछ सोचना होगा···? मगर यह सब मुझसे देखा नहीं जाता। सुना नहीं जाता, सहा नहीं जाता।

माधव : तो मेरी खुशामद करने से क्या होगा ? तुम भाभी के पास जाकर एक बार खड़ी भर हो जाओ। सब ठीक हो जाएगा। वे तो साक्षात दया की मूर्ति हैं।

बिंदु : आज समझी कि मन ही मन तुम मुझे ही दोषी समझते हो। इसीलिए जब जीजी को गृह प्रवेश के दिन जब तुम लिवा लाए थे, और वह दिन भर बिना खाए-पिए काम करती रही थी, तब भी तुम दुश्मन की तरह चुप रहे थे। कुछ भी नहीं बोले थे।

माधव : नहीं। बर्दाश्त करने की ताकत मैंने अपने भइया से सीखी है।

बिंदु : एक बार तुम वहां चले जाते···तो···

माधव : मैं भइया के पास जाकर यह सब कभी नहीं कह सकता। इतनी हिम्मत मेरी नहीं होगी कि बिना उनके पूछे, मैं अपनी ओर से उनसे कुछ कहूं। तुम नहीं जा सकती ?

बिंदु : (सिर हिलाकर) नहीं।

माधव : तो फिर जैसा चाहो करो ? मैं तो कपड़े बदल कर कचहरी जा रहा हूं।

(माधव भीतर चला जाता है। नरेन्द्र स्कूल

जाने के लिए किताबें लिए हुए जैसे बाहर की सड़क से जा रहा है—)

बिंदु : (सामने की तरफ जैसे देखकर और आवाज़ लगाकर) क्यों रे नरेन ! सुन···इधर आ···

नरेन्द्र : आया मामी···(पास आकर) जी

बिंदु : यही तो स्कूल जाने का सीधा रास्ता हैं ? तुम लोग इसी रास्ते रोज़ स्कूल जाते हो न···

नरेन्द्र : हां, मामी।

बिंदु : फिर वह अमूल्य इधर से जाता हुआ दिखाई क्यों नही देता ? तुम साथ-साथ स्कूल नही जाते ? (नरेन्द्र को मौन देखकर) तुम दोनों भाई बातचीत करते हुए एक साथ इधर से जाओ आओ तो···

नरेन्द्र : वह मारे शरम के इधर से नही आता। वह पीला मकान दिखाई देता है न, वो···अमूल्य उधर से ही घूमकर निकल जाता है।

बिंदु : उसे किस बात की शरम हैं रे ?···नही, नहीं, उससे कह देना इधर ही से जाया करें ?

नरेन्द्र : वह कभी नहीं जाएगा मामी। जानती हो क्यों ?

बिंदु : क्यों ?

नरेन्द्र : तुम नाराज़ तो नही होगी ?

बिंदु : नहीं।

नरेन्द्र : उसके घर पर किसी से कहला तो नहीं भेजोगी ?

बिंदु : नहीं, नही !

नरेन्द्र : मेरी अम्मां से भी नही कहोगी ?

बिंदु : बात तो बता न, मैं किसी से कुछ न कहूंगी !

नरेन्द्र : (धीरे से) क्लास टीचर ने एक दिन उसकी बहुत पिटाई की थी···

बिंदु : क्यों ? उसको हाथ लगाने की हिम्मत क्लास टीचर ने कैसे की ?

नरेन्द्र : क्लास टीचर की क्या गलती है मामी। वह तो नए-नए आए हैं। गलती हमारे बदमाश नौकर हबुआ की है। उसने मां से जड दिया; मां भी कम नहीं, उसने मास्टर से कहला दिया; बस उन्होने अमूल्य की खूब पिटाई कर दी···

बिंदु : हबुआ ने क्या कह दिया ?

नरेन्द्र : हबुआ स्कूल मे मेरा खाना लेकर आता है न; तब अमूल्य दौडकर पास आ जाता था और पूछता था; नरेन्द्र दादा दिखाओ तो···बुआजी ने क्या खाना भेजा है ! हबुआ से यह सुना तो सुनकर बोली—अमूल्य को खाना मत दिखाया कर, वो नजर लगा देता है !

बिंदु : तो क्या उसके लिए कोई खाना नही ले जाता ?

नरेन्द्र : (माथा ठोंककर) कहां मामी, वे लोग बेचारे गरीब आदमी हैं। जेब मे भुने हुए चने ले जाता है, खाने की छुट्टी मे वही कही छुपकर खा लेता है।

बिंदु : अच्छा अच्छा, तुझे स्कूल को देर हो रही है। तू जा।

(तभी माधव पुन: लौटता है)

माधव : सुनती हो, फरासडांगा से तार आया है। तुम्हारे पिता जी की तबियत खराब है। मैं सोचता हू तुम आज ही शाम को चली जाओ।

बिंदु : बिना जेठ जी की आज्ञा के कैसे चली जाऊं।

माधव : उनसे मैं पूछ आता हू। तुम तैयारी करो।

(अन्तराल)

(अन्नपूर्णा बैठी कथरी-सी रही है। यादव पास बैठे हुक्का पी रहे हैं। हुक्के की गुड़गुड़ाहट··· अमूल्य बैठा हिसाब लगा रहा है—10 सत्ते 70···)

अन्नपूर्णा : राम ! राम ! मैके जाते समय छोटी बहू यह क्या कह

गई कि यही जाना आखरी जाना हो। मां दुर्गा करें वह राजी खुशी घर लौटे।

यादव : जो कुछ हुआ, वो हुआ...पर तुमने झगडा करके अच्छा नहीं किया...असल बात ये है कि मेरी बहू रानी को किसी ने नहीं पहचाना।

अन्नपूर्णा : वह भी तो जीजी कहकर एक बार भी पास नही आई। अपने लडके को वह जबरदस्ती ले जाती तो क्या मैं मना कर देती। गृह प्रवेश के दिन देवर जी मुझे बुला ले गए। लौटने लगी तो पता है उसने कितनी कड़ी-कड़ी बातें कह डाली!

यादव : जो भी कही हों...। छोटी बहू की बात सिर्फ मैं ही समझता हूं। अगर तुम माफ नहीं कर सकती तो बड़ी क्यों हुई? जैसी तुम हो, वैसा ही वह मेरा भाई है—माधव। लगता है तुम लोग मेरी बहूरानी के प्राण लेकर मानोगे।

अमूल्य : बाबूजी, छोटी मां कहा गई है?

अन्नपूर्णा : तेरे नाना बीमार हैं, वह उन्हें देखने गई है। तू जाएगा उसके पास?

अमूल्य : नहीं।

यादव : आज मेरा मन न जाने कैसा हो रहा है। बार-बार लगता है जैसे बहूरानी पहले की तरह दरवाजे की ओट में खडी है।

(माधव चिंतित-सा आता है)

माधव : भैया!

यादव : कौन माधव! अरे! तुम तो फरासडागा गए थे न।... बहू तो अपने पिता जी को देखने गई थी...यह एकाएक उसकी तबियत कैसे बिगड़ गई...

अन्नपूर्णा : बिन्दो तो ठीक है न! तुम इतने परेशान क्यों हो?

माधव : बाकी सब बाद में बताऊंगा...इस वक्त अमूल्य का

जाना जरूरी है। शायद उसका आखिरी समय आ पहुंचा है।

अन्नपूर्णा : नहीं, नही, ऐसा मत कहो। बिन्दो को कुछ नहीं हो सकता·· नही ··

यादव : यह नही होगा माधव, यह नहीं हो सकता। मैंने जाने-अनजाने कभी किसी को दुःख नहीं दिया। भगवान इस उमर मे मुझे कभी ऐसा दड नही देंगे।

माधव : कहती थी मेरा सब कुछ अमूल्य ही है, वही मुझे आग दे। उसकी मा ने, मैंने, सभी ने दवा पिलाने की कोशिश की, पथ्य देना चाहा, मगर वह किसी की नही सुनती। इसीलिए मैं इसे लेने आया हूं जिनकी बात वह कभी टाल नहीं सकती।

यादव : मैं उसे वापस लिवा लाऊंगा माधव, तू घबड़ा मत।

माधव : मुझसे ज्यादा तो आप घबड़ा रहे है। भइया।

यादव : गाड़ी है साथ में ?

माधव : रात बीत जाए तो चलें···

यादव : नही, नही अभी गाड़ी बुला लो, नही तो मैं पैदल ही चल दूंगा !

(अन्तराल—फिर अन्तराल अवसाद भरे संगीत से समाप्त होता है)

(बिंदु के कराहने की आवाज़—माधव, अन्ना और यादव के आने का आभास··)

बिंदु : (पति को देखकर) आ गए ?

माधव : हां। साथ मे सभी लोग आए हैं···रास्ते में ही रो-रो कर सो गया।

अन्नपूर्णा : दवाई क्यों नही पीती छोटी बहू ? क्या जान ही दे देगी ? जानती है मुझ पर क्या बीत रही है ?

यादव : घर चलो बहूरानी। मैं लिवाने आया हू। और एक दिन जब तुम इतनी सी थी बेटी, तब मैं आकर अपने

घर की लक्ष्मी को लिवा ले गया था। यहां फिर आना होगा, यह मैंने नहीं सोचा था। सो बेटी सुनो, जब आया हूं तब या तो तुम्हें साथ लेकर जाऊंगा या फिर उस घर की ओर मुंह ही न करूंगा। जानती तो हो। मैं झूठ कभी नहीं बोलता!

(तभी अमूल्य जैसे आंखें मलता हुआ आता है, बिंदु उसे अपनी बांहों में कर लेती है।)

अमूल्य : छोटी मां···

बिंदु : अमूल्य···मेरे बेटे···

अमूल्य : छोटी मां, तुम बीमार थीं क्या?

बिंदु : थी बेटा, अब नहीं हूं।

अमूल्य : सुना तुम खाना नहीं खाती···पानी नहीं पीती··· दवा तक नहीं लेती छोटी मां···

अन्ना : अब तू ही इसे डांट लगा बेटे···मेरी तो यह सुनेगी नहीं···(बिंदु से) क्यों दुख देती है हमें···बोल···(रो पड़ती है)

अमूल्य : तुम मत रोओ बड़ी मां···

अन्ना : तो इससे पूछ···क्या खाएगी···क्या पड़े-पड़े ऐसे ही जान देगी···पूछ इससे···

बिंदु : तुम खाने को क्या दोगी जीजी, जो दोगी···वह खा लूंगी···ले आओ। अमूल्य तू मेरे पास बैठ। अब डर नहीं है, मैं जी गई। ···मैं जी गई हूं···

अवधि : तीस मिनट (फेड आउट)

डॉक्यूमेंटरी

साहसी यात्री : वास्कोडिगामा

(रेडियो-डॉक्यूमेंटरी रेडियो का एक बहुत लोकप्रिय कला-रूप है। इसमें तथ्य ही लेखन की परिसीमाएं तय करते हैं और उसके विकास क्रम को निर्धारित करते हैं।

यह रचना आकाशवाणी इलाहाबाद से 10.11.59 को प्रसारित हुई थी। इसे संकलन में शामिल करने का मकसद सिर्फ यही है कि इस तरह का लेखन एक संयम देता है—जहां आप शब्दों के द्वारा एक ही साथ 'समय' और उसके 'वातावरण' का निर्माण करते हैं। शब्द-संयम और सार्थकता—यही इसकी शर्तें होती है, कि 15 मिनटों में आपको क्या और कैसे कहना है।

इस तरह के रेडियो-लेखन ने मुझे शब्द-बहुलता और शब्दों की पच्चीकारी से बचने का अभ्यास कराया और अपने शब्दों के अर्थों को समझने तथा दूसरों तक उसी अर्थ को पहुंचाने का दिशा ज्ञान दिया।

इस तरह के लेखन में तात्कालिकता एक बड़ी शर्त होती है—कि किस क्षण आप कौन-सा शब्द चुनते हैं और उस शब्द की पुनरावृत्ति से कैसे बचते हैं।)

वाचक 1 : अच्छा, अब तुम्हें एक साहसी मल्लाह की कहानी सुनवाएं। मध्यकाल मे दुनिया ऐसी नहीं थी जैसी आज है। आज हम बेखटके कही भी सुविधापूर्वक आ-जा सकते हैं। बहुत मज़बूत जहाज़ हैं। बड़े अच्छे हवाई जहाज़ है। जिनके द्वारा हम संसार के कोने-कोने की सैर कर सकते हैं।

(जहाज़ो और हवाई जहाज़ों के साउण्ड इफ़ैक्ट)

वा० 2 : पन्द्रहवी सदी मे आवागमन के ज़रियों की बहुत कमी थी। न इतने मज़बूत जहाज़ थे। और न हवाई जहाज़। हमें यह भी पता नहीं था कि दुनिया सचमुच कितनी बड़ी थी? कैसे-कैसे देश। और कैसे-कैसे लोग इस धरती पर रह रहे थे।

(विचित्र-सा संगीत)

वा० 1 : पर कुछ देशों ने उस समय भी काफी उन्नति कर ली थी। स्वयं हमारे हिंदुस्तान के लोग। समुद्री रास्तों से पूरब में जावा-सुमात्रा तक। और दक्षिण-पश्चिम में अफ्रीका तक व्यापार करने जाते थे।

वा० 2 : हमारे हिन्दुस्तान का नाम दूसरे देशों मे पहुच चुका था। और लोग हमारे स्वर्ग से देश को देखने के लिए लालायित रहते थे।

वा० 1 : पर रास्ते कहां थे। स्थल पर नदियां और अपराजेय पहाड़। और लहरें मारता हुआ समुद्र दूसरे रास्ते रोके था।

(सागर के गर्जन की तेज़ आवाज़)

वा० 2 : लेकिन यह कठिनाइयां मनुष्य के साहस को चुनौती देती थी। समुद्र की इसी चुनौती को। पुर्तगाल देश के उस महान समुद्री मल्लाह ने स्वीकार किया था। (गर्जन जारी है।)

वा० 1 : उसका नाम था वास्कोडिगामा। यही वह महान मल्लाह था। जिसने आज से लगभग 500 साल पहले अपने अपार साहस के बल पर हिंदुस्तान का रास्ता खोज निकाला था।

वा० 2 : वास्कोडिगामा के साहस और वीरता की कहानी। आज भी सुनहरे अक्षरों में मनुष्य जाति के इतिहास में अंकित है।

(संगीत की एक तेज लहर)

वा० 1 : वह बचपन से ही समुद्र-विजय के सपने देखा करता था। लगभग सन 1460 में उसका जन्म पुर्तगाल देश के अलिपतेजो प्रान्त के साइनीज़ नगर मे हुआ था। यह एक बन्दरगाह था। और बचपन से वास्कोडिगामा समुद्र की मनोहर छवि। और उत्ताल तरंगें देखा करता था।

(सागर की शांत लहरों का स्वर)

वा० 2 : उसने समुद्र से दोस्ती कर ली थी। वहीं घूमता। आते-जाते जहाजों को देखता। उन्हें देखकर निश्चय करता। कि एक दिन वह भी समुद्री मल्लाह बनकर दूर देशों को जाएगा।

वा० 1 : ऐसे देशों को। जिनका कोई पता नही। अनजान धरती पर वह पैर रखेगा। सागर-तट पर घंटों बैठा। वह इन्ही विचारों में डूबा रहता। वह बड़ा हो। और कब सागर के अपार वक्ष पर वह अपना बेडा लेकर जाए।

वा० 2 : यही उसका सपना था। वे अनजान और अदेखे देश।

उसकी आंखों के सामने नाचा करते थे। उसके देश के और मल्लाह। जब-तब दूसरे देशों की खोज में अपने बेड़े लेकर जाया करते थे।

वा० 1 : एक दिन उसका सपना सच होने लगा। वह तब पैंतीस वर्ष का हो चुका था। अपने उसी सपने की पूर्ति के लिए। वह सागर से जूझता रहा। और तब तक। एक कुशल मल्लाह के रूप में उसका नाम हो चुका था।

(सागर की टकराती लहरों का स्वर)

वा० 2 : पुर्तगाल की गद्दी पर उस समय राजा मैनुएल प्रथम आसीन थे। पुर्तगाल के मल्लाह कुछ वर्ष पहले। अफ्रीका के तट की खोज कर चुके थे। और उसी साहसी मल्लाहों की जाति ने। अन्य देशों के रास्ते खोज निकालने का बीड़ा उठाया था।

वा० 1 : राजा मैनुएल प्रथम ने। उस महान और ऐतिहासिक समुद्री यात्रा का आयोजन करवाया। जिसके द्वारा हिन्दुस्तान के रास्ते की खोज होनी थी। बेड़े के कप्तान की खोज शुरू हुई तो वास्कोडिगामा पर नजर पड़ी। और उस महान यात्रा का नायक उसे ही बनाया गया।

(संगीत में मिली-जुली विजय सूचक तालियों की आवाज़)

वा० 2 : उस बेड़े में चार जहाज़ थे। और तमाम आदमी और मल्लाह साथ थे। वास्कोडिगामा कितना प्रसन्न था उस दिन। चलने से पहले उन वीरों ने एक चैपल में ईश्वर की कृपा की आकांक्षा करते हुए यात्रा शुरू की। सबसे पहले वे चैपल में गए।

(पृष्ठभूमि में गिरजे के घंटों की आवाज़ और ईसाई-पादरियों द्वारा ईशस्मरण का स्वर··· कोलाहल···)

वास्कोडिगामा : (प्रार्थना करता हुआ) हे ईश्वर! हम तुझसे प्रार्थना

करते हैं कि हमारे प्रयत्नों का तू अपनी सद्प्रेरणा से संचालन कर।

कई स्वर : (उपरोक्त वाक्य को दोहराते हैं। पृष्ठभूमि में गिरजे का वातावरण रहता है)

वास्कोडिगामा : हे ईश्वर ! हम सारे मल्लाह तेरे सामने शपथ लेते हैं कि हम सब साहस से आगे बढ़ेंगे उन अनजान राहों की खोज करेंगे जो आज तक परिचित नही हैं।

कई स्वर : (दुहराते हैं)

वास्कोडिगामा : और स्वय मैं अपने देश के राजा की आज्ञा को कृपा की तरह स्वीकार कर अपने साथियों के साथ यह प्रतिज्ञा करता हूं कि जो महान कार्य मुझे सौंपा गया है, उसे तेरी कृपा से पूरा करूंगा और अपने साथी मल्लाहों के साथ सहयोग करके अपने प्राणों की बाजी लगाकर भी हम इस महान यात्रा में आगे ही बढ़ते जाएंगे।

कई स्वर : हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम अपने नायक वास्कोडिगामा के नेतृत्व में सहयोगियो की तरह रहेगे ! हर मुश्किल को मिलजुल कर सहेंगे और हर कठिनाई का बहादुरी से सामना करेंगे।

वास्कोडिगामा : हे परम पिता परमेश्वर! हमे शक्ति दे और अपनी सद्-प्रेरणा से हमारे कार्य का संचालन कर···

कई स्वर : आमीन···आमीन···

(चैपल की छोटी-छोटी घंटियां बजती हैं। बड़े पवित्र वातावरण का प्रभाव। एक क्षण बाद।)

वास्कोडिगामा : साथियो ! अब हमे अपनी महान यात्रा पर चलना है। ईश्वर का आशीर्वाद और साथियों का साहस हमारे साथ है। हम समुद्री तूफानों का मुकाबला करेंगे··· जिएंगे···मरेंगे, पर हिन्दुस्तान की राह खोजकर ही वापस आएंगे।

(सागर का उद्दाम और तूफानी स्वर···गिरजे

के घंटों की ध्वनि के साथ फेड आउट होता है)

वा० 1 : और वे साहसी मल्लाह। अपने प्राणों की बाजी लगाकर वास्कोडिगामा के नेतृत्व में। 9 जुलाई सन् 1497 को चार जहाजों का बेड़ा लेकर समुद्र की छाती पर चल पड़े।

वा० 2 : पाल हवा से फूल गए। मस्तूल गर्व से उन्नत हो गए। और वास्कोडिगामा की महान जय-यात्रा शुरू हुई।

(संगीत और सागर के स्वर तथा बेड़ा चलने के मिले-जुले स्वर)

वा० 1 : बड़ी ही भीषण यात्रा थी यह। हवा पर जहाजों का भाग्य निर्भर था। समुद्र की अथाह गहराइयां। और उठते हुए तूफान। जल के नीचे छुपी हुई अनगिनत चट्टानें। जिनसे टकरा कर अच्छे-अच्छे जहाज टुकड़े-टुकड़े हो जाते थे। और फिर समुद्री लुटेरों का भय।

वा० 2 : पर वास्कोडिगामा और उसके साथी मल्लाह वीर थे। एक बड़ा काम करने की महान आकांक्षा से उनके दिल भरे हुए थे। वे अपने काम की सफलता के लिए मौत से जूझने को निकल पड़े थे। उन्हें कौन रोक सकता था।

वा० 1 : अफ्रीका-तट के रास्ते की खोज पुर्तगाली मल्लाह पहले ही कर चुके थे। उसी रास्ते पर समुद्र की छाती चीरता हुआ वास्कोडिगामा का बेड़ा बढ़ता जा रहा था। पर समुद्र की भयानकता किसने देखी थी। कब क्या हो जाए। कब तूफान आ जाए। और इन साहसी मल्लाहों के जीवन खतरे में पड़ जाएं। बेड़ा तहस-नहस हो जाए।

वा० 2 : पर वास्कोडिगामा साहस और धीरज की अचल मूर्ति की तरह सब देख रहा था। हर भयानकता का सामना करने के लिए तैयार था। बेड़े में काफ़ी रसद थी। तूफान में नष्ट-भ्रष्ट हो जाने वाली चीज़ों को दुबारा

ठीक करने के साधन उसके पास थे।

वा० 1 : हवा की दिशा के सहारे वे रुक-रुक कर निरन्तर चलते रहे। उन्हें चलना था।

(तेज़ हवा का स्वर)

वा० 1 : भारत के समुद्री मार्ग की खोज करनी थी। लगातार चार महीने तक वास्कोडिगामा का बेड़ा अपार जल-राशि पर चलता रहा। और उन्होंने दक्षिणी अफ्रीका मे सैंटहेलैन की खाड़ी में लंगर डाला।

(लोहे की जजीरों के फेंके जाने का स्वर)

वा० 2 : पर मौसम खराब हो रहा था। लेकिन किया भी क्या जाता। उन्हें बढना ही था। तूफानों से भी टक्कर लेनी थी। अनहोनी को किसने देखा था।

(भयंकर तूफान का सकेत। समुद्री तूफान। बेड़े के मांझियों का चीखना-चिल्लाना। कुछ सुनाई पड़ता है, कुछ नहीं।)

1 स्वर : जल्दी संभालो ! बचाओ…

कई स्वर : डिगामा से कहो हम आगे नही जाएंगे…भयंकर तूफान है…

1 स्वर : (चीखता हुआ) बेड़े खतरे में हैं, हम नष्ट हो जाएंगे।

(हवा सनसनाती है)

वास्कोडिगामा : साथियो ! यह धीरज खोने का समय नही है। तूफान आया है, हम मुकाबला करेंगे। उधर वाले बेड़े को देखो। तुम लोग उधर जाओ।

(अजीब कोलाहल)

1 स्वर : मस्तूल टूट गए हैं… (शोर होता है)

वास्कोडिगामा : घबराने की ज़रूरत नही। आखिर तूफान थमेगा।

1 स्वर : पर तब तक हम नही बच पाएंगे।

वास्कोडिगामा : हम मर नहीं सकते। हम आगे बढ़ेंगे पर रुक कर। बेड़ा संभाले रहो।

(कोई चीज चरचरा कर टूटती है समुद्री लहरों का भयानक स्वर)

1 स्वर : (बेहद घबराया हुआ) अब हम नहीं बच पाएंगे···
(चीख-पुकार)

वास्कोडिगामा : साथियो ! घबराओ मत ! हिम्मत रखो साथियो ! तूफान अब थमने वाला है।

1 स्वर : सब पाल फट गए हैं, अब हम कैसे जाएंगे।

वास्कोडिगामा : हम नये पाल चढ़ाएंगे, तूफान थम रहा है। हिम्मत हारने से कुछ नहीं होगा साथियो !
(धीरे-धीरे तूफान थमता है)

वास्कोडिगामा : हम अफ्रीका के पूर्वी तट से हिन्दुस्तानी मल्लाहों या सौदागरों की मदद प्राप्त करेंगे और आगे जाएंगे···

1 स्वर : पर अब कैसे आगे बढ़ सकेंगे ! मस्तूल टूट चुके हैं, पाल फट गए हैं और बेड़ा बुरी हालत मे है।

वास्कोडिगामा : हम तूफान की खाड़ी मे घिर गए हैं। पर आज हम इस तूफान का सामना करके इस खाड़ी का नाम बदलेंगे।
(तूफान थमता है)

वा॰ 1 : और तूफान थम गया। वास्कोडिगामा की हिम्मत के सामने हार मान गया। वह धीर-वीर अडिग खड़ा रहा। मस्तूल फिर से बनाए गए। फटे हुए पालों को सिला गया। बेड़े की मरम्मत की गई और यात्रा अनवरत चालू रही।

वा॰ 2 : दक्षिणी अफ्रीका के निचले भाग का चक्कर लगाकर वे आखिर पूर्वी तट पर पहुचे। यह मलिन्दी बन्दरगाह था।

वा॰ 1 : यहां हिन्दुस्तानी सौदागर आया करते थे। बड़ी मुश्किल से वास्कोडिगामा ने एक हिन्दुस्तानी सौदागर को अपने साथ लिया। और फिर यात्रा पर, चल पड़ा। कोई शक्ति उसे हरा नही पाई। उसके धीरज और साहस

को तोड़ नहीं पाई ।—वह हंसते-हंसते आगे बढ़ा । पूरब की ओर । हिन्दुस्तान की ओर । (भारतीय संगीत की एक लहर)

वा० 2 : सफलता उसका इन्तजार कर रही थी । हवाएं अनुकूल हो गई थी । सागर शांत हो गया था । उसने वास्कोडिगामा के साहस और धीरज की परीक्षा ले ली थी ।

वा० 1 : और वास्कोडिगामा का बेड़ा सागर की छाती चीरता हुआ । हिन्दुस्तान के मालाबार तट पर कालीकट पहुंच गया । यह दिन था मई 20 सन् 1498 । यह वह महान दिन था । वह ऐतिहासिक दिवस था । जिसने उस महान समुद्री यात्री का स्वागत भारत की भूमि पर किया था । लगातार ग्यारह महीनों के अटूट साहस ने यह दिन दिखाया था । भारत के लिए जलमार्ग की खोज हुई थी । तभी से भारत का अटूट संबंध यूरोप से जुड़ गया । जो आज इतना विकसित हो चुका है । यह वास्कोडिगामा की अद्‌भुत शक्ति । और अपार साहस का चमत्कार था ।

(हर्ष भरा विजय सूचक संगीत भारतीय वाद्यों का)

वा० 2 : और हिन्दुस्तान की खोज और उस महान ऐतिहासिक एवं साहसपूर्ण यात्रा की यादगार में । वास्कोडिगामा ने संगमरमर का एक स्तंभ कालीकट में बनवाया था । वह स्तंभ आज भी उस महान साहसी समुद्री यात्री वास्कोडिगामा की कीर्ति की कहानी कह रहा है ।

(संगीत उभरता है—फिर फेड आउट)

अवधि : 15 मिनट

प्रहसन

चमत्कार

(प्रहसन रेडियो लेखन का अत्यंत महत्वपूर्ण कला-रूप है। मौलिकता इसकी पहली मांग है और श्रोता की रुचि को निरंतर बनाये रखना इसकी आवश्यकता है। प्रहसन के कुछ पहले क्षणों में पात्रों की पहचान तथा श्रोता के लिए उनकी आवाजों की स्थापना करना इस कला-रूप में जरूरी होता है—इनमें आवाजों का अलग-अलग होना एक बड़ी जरूरत है ताकि श्रोता कुछ क्षणों बाद मात्र आवाज और उसके लहजे से पात्र को पहचान पाये।
बड़ी से बड़ी बात कह सकने का यह एक अत्यंत गंभीर पर मनोरंजक माध्यम है।)

(पृष्ठभूमि में किसी दफ्तर का आभास। फाइलें पटकने, टाइपराइटर चलने और चपरासी को बुलाने की आवाजें। प्रोप्राइटर के केबिन से स्पष्ट स्वर उभरते हैं।)

छेदीलाल : चाय पिओ भाई अमरनाथ जी···(प्याले खटकते हैं) इतने दिन बाद तो आपका आना हुआ है···हूं···हैं··· मैं तो समझा भूल ही गये तुम···

अमरनाथ : भई मैंने बाहर से देखा तुम्हारी फर्म को···एकदम रंग ढंग बदला हुआ नजर आया···सोचा जरा चल कर देखूं···मैं आपकी अक्ल की दाद देता हूं छेदीलाल जी ···आपने तो आफिस की काया पलट कर दी ··मान गया आपकी बुद्धि को···(चाय का घूंट लेते हुए आखिरी शब्द कहते हैं।)

छेदीलाल : (फूल कर) खून को पसीना और पसीने को खून करना पड़ा अमरनाथ जी। (छोटी-सी हंसी)

अमरनाथ : तो बिजनैस का कुछ गुरुमंत्र हमें भी दीजिए। (प्याला रखता है)

छेदीलाल : बिजनैस का मंत्र। (वही छोटी-सी हंसी जो वे सांस लेते हुए खींच कर हंसते हैं और जिसकी आवाज काफी बेहूदी है) वाह वाह अमरनाथ जी···अपने बिजनैस का राज तो ये स्लोगन्स हैं! भई मैं तो स्लोगन्स में बहुत विश्वास करता हूं···समझे आप···(वही छोटी-सी हंसी)

अमरनाथ : स्लोगन्स ! मैं समझा नही छेदीलाल जी।

छेदीलाल : स्लोगन्स नहीं समझे···यानि नारे ! यह नारेबाजी का जमाना है। दुनिया नारेबाजी के सहारे चल रही है···

अमरनाथ : (ठहाका लगाकर बात बीच में रोक लेता है) दुनिया की चाल की आपने जो कैफियत दी है···वाह···वाह··· (हंसता है)

छेदीलाल : (बुद्धूपन से) आप हंस रहे है। ऐं···आप हंसते हैं। मैं कहता हूं आजमा कर देखिए।

अमरनाथ : आप की बात···

छेदीलाल : (बात काटकर) अंग्रेजों में कुछ खासियतें थी। यह नारे-बाजी उन्हीं की देन है। समझे आप। ये दैनिक अखबार क्या हैं ? सिर्फ नारेबाजी ! यह हमने उनसे सीखा··· और···और मैं तो यहा तक कहता हूं कि हम आजाद ही नारों से हुए, नही तो हमारे पास था क्या, कहिए गलत कहता हूं ?

अमरनाथ : (हां में हां मिलाने की गरज से) आपका कहना बहुत हद तक दुरुस्त है···

छेदीलाल : (उसकी बात से बेखबर होकर) एक मिनट, जरा दफ्तर का हाल चाल देख लूं···बस आधा मिनट···

अमरनाथ : (मजाक में) वाह छेदीलाल जी···राम भरोसे बैठ के सब का मुजरा लेय। यह पर्दा बड़े काम का है, जरा-सा हटाया और दफ्तर का हाल देख लिया···वाह साब··· वाह···जरा सी गर्दन झुकायी और (शायरी पढ़ने के अदाज में)

छेदीलाल : (बेहद खिन्न स्वर मे जैसे मुंह का जायका बिगड़ गया हो) ये नये साहब कभी अपनी मेज पर नजर नहीं आते···

अमरनाथ : (सवेदना से) कौन साहब।

छेदीलाल : अरे साहब क्या बताये क्लर्क

सोचा था कि धीरे-धीरे पूरा स्टाफ बदल दूं। अब वह जमाना तो रहा नहीं कि तख्त और मसनद के सहारे बिजनैस किया जाय। समझे आप···(कुछ रुक कर) पहले मैंने फर्नीचर बदलवा दिया, फिर पुराने मुंशियों को निकाल कर नये अपटूडेट क्लर्क रख लिए···(कहते हुए अपनी महानता और सूझ के गर्व से भर जाते हैं) चौकीदार···या उसे चपरासी कहिए, वह भी बदल दिया···

अमरनाथ : (व्यंग्य से) आप भी बहुत बदले नजर आ रहे हैं।

छेदीलाल : (अपनी छोटी-सी हंसी के साथ) आपका मतलब मेरे लिबास से है।

अमरनाथ : मैंने तो हमेशा आपको धोती कुर्ते में देखा था···

छेदीलाल : जी हां, जी हां···पर अमरनाथ जी, वक्त बहुत बदल गया है, 'नाउ बिजनैस डिमांड्स प्रॉपर पर्सनैलिटी!' मेरा मतलब है कि व्यापार में अब व्यक्तित्व का बहुत बड़ा स्थान है। और एक बात बताऊं···(जैसे भीतर-भीतर प्रसन्नता से भरे जा रहे हों) मैंने एक स्टैनो भी रख ली है। बड़ी जमाऊ लड़की है···जिस दिन से स्टैनो रखी, बस उसी दिन से लिबास भी बदल लिया··· इस लिबास की बात ही और है···आप विश्वास कीजिए, अंग्रेजों मे बड़ी-बड़ी खासियतें थी···

अमरनाथ : जी।

छेदीलाल : एक खासियत मैंने बताई नारे की। दूसरे महायुद्ध के समय अंग्रेजो ने 'वी फॉर विक्टरी' (V for Victory) का नारा देकर लड़ाई का पासा पलट दिया। कहां मैदान हाथ से निकला जा रहा था, कहां मैदान मार लिया···गलत कह रहा हूं (हंसते हैं)

अमरनाथ : तो आपने बिजनैस मे नारे का फायदा कैसे उठाया?

छेदीलाल : ये लम्बी दास्तान है···आपको एक नमूना दिखाऊं···

छेदीलाल : खजांची को बुलाओ।

अमरनाथ : अच्छा छेदीलाल जी, अब तो मुझे आज्ञा दीजिए···

छेदीलाल : मैं भी चलता हूं···आप शायद घबरा गये···पर इससे क्या होता है। अभी तक मैंने व्यापार के लिए नारा दिया था सो व्यापार ठीक चलता रहा, अब मैं दफ्तर के काम के लिए नारा दूंगा, बस समझिए कि सब ठीक हुआ। नारा दिया नहीं कि गाड़ी पटरी पर आई।

जगनू : (भीतर आकर) हजोर।

छेदीलाल : क्या है।

जगनू : खजांची बाबू कहते हैं कि रोकड़ मिला कर आ रहा हू।

छेदीलाल : अच्छा, पानी लाओ। आप पानी पीजिए अमरनाथ जी।···आप देखिएगा कि मैं कैसे सब काम ढर्रे पर लाता हू। मैं हार नहीं सकता···यह कल के लड़के मुझे चलायेंगे भला··· (बड़बड़ाते जाते हैं) यह साला क्लर्क वर्मा···

(गिलासों की खनक)

जगनू : हजोर पानी।

छेदीलाल : इधर देखो मेरी तरफ। मैंने कितनी बार तुमसे कहा है कि पानी हमेशा प्लेट में रख कर लाया कर जाओ प्लेट में रख कर लाओ···जाओ···

अमरनाथ, वह टाइपराइटर बन्द हो गया।

इधर देखिए…हां हां पर्दा हटा लीजिए…उधर वह घड़ी के पास दफ्तर की दीवार पर…(कुर्सियां खटकती हैं)

अमरनाथ : मुझे नही दिखाई पड़ता…

छेदीलाल : (जोर-जोर से घंटी बजाते हुए चीखते हैं) चपरासी… जगनू।

जगनू : जी हजोर…(पीछे से आवाज़ देता है।)

छेदीलाल : (परेशान से) अमरनाथ जी एक मिनट…मैं ज़रा इधर का मामला ठीक कर लूं…चपरासी…

जगनू : जी हजोर (आकर)

छेदीलाल : मेम साब को बुलाओ (गुस्से से) बोलो फौरन इधर आयें…(हांफते हैं)

जगनू : जी हजोर…मेम शाब नही हैं हजोर !

छेदीलाल : (उसी तैश में) वर्मा बाबू को बुलाओ…

जगनू : जी हजोर, वर्मा शाब भी नही हैं…

छेदीलाल : कहां हैं सब लोग…देख कर आओ…जाओ…

जगनू : बहुत अच्छा हजोर…(जाता है।)

छेदीलाल : देखा आपने अमरनाथ जी…मैं तो इन नये छोकरे छोकरियों की वजह से परेशान हूं…जब देखिए तब कुर्सी खाली और टाइपराइटर बन्द।

अमरनाथ : स्टैनो के पास काम नहीं होगा…

छेदीलाल : वाह ! इसका क्या मतलब। मैंने कह रखा है कि काम न भी हो तो भी टाइपराइटर की आवाज़ बराबर आनी चाहिए…

जगनू : (भीतर आकर) हजोर…वर्मा शाब मेम शाब के साथ चाह पीने सामने होटल में गये हैं…

छेदीलाल : (बात सभालते हुए) ओह, भूल ही गया…अच्छा अमरनाथ जी…हैं…है…मैं सब को चाय पीने की

इधर देखिए…हां हां पर्दा हटा लीजिए…उधर वह घड़ी के पास दफ्तर की दीवार पर…(कुर्सियां खटकती हैं)

अमरनाथ : मुझे नहीं दिखाई पड़ता…

देवीलाल : (जोर-जोर से घंटी बजाते हुए चीखते हैं) चपरासी… जगनू।

जगनू : जी हजोर… (पीछे से आवाज देता है।)

देवीलाल : (परेशान से) अमरनाथ जी एक मिनट…मैं जरा इधर का मामला ठीक कर लूं…चपरासी…

जगनू : जी हजोर (आकर)

देवीलाल : मेम साब को बुलाओ (गुस्से से) बोलो फौरन इधर आयें…(हांफते हैं)

जगनू : जी हजोर…मेम साब नहीं हैं हजोर!

देवीलाल : (उसी ढंग में) वर्मा बाबू को बुलाओ…

जगनू : जी हजोर, वर्मा साब भी नहीं हैं…

देवीलाल : कहां है सब लोग…देख कर आओ…जाओ…

जगनू : बहुत अच्छा हजोर…(जाता है।)

देवीलाल : देखा आपने अमरनाथ जी… मैं तो इन नये छोकरे छोकरियों की वजह से परेशान हूं…जब देखिए तब कुर्सी खाली और टाइपराइटर बन्द।

अमरनाथ : स्टैनों के पास काम नहीं होगा…

देवीलाल : वाह! इसका क्या मतलब। मैंने कह रखा है कि काम न भी हो तो भी टाइपराइटर की आवाज बराबर आनी चाहिए…

जगनू : (भीतर आकर) हजोर…वर्मा साब मेम साब के साथ चाह पीने सामने होटल में गये हैं…

देवीलाल : (बात सम्भालते हुए) ओह, भूल ही गया…अच्छा अमरनाथ जी…हैं…हैं…मैं सब को चाय पीने की

सोचा था कि धीरे-धीरे पूरा स्टाफ बदल दूं। अब वह जमाना तो रहा नहीं कि तख्त और मसनद के सहारे बिजनैस किया जाय। समझे आप···(कुछ रुक कर) पहले मैंने फर्नीचर बदलवा दिया, फिर पुराने मुंशियों को निकाल कर नये अपटूडेट क्लर्क रख लिए···(कहते हुए अपनी महानता और सूझ के गर्व से भर जाते हैं) चौकीदार···या उसे चपरासी कहिए, वह भी बदल दिया···

अमरनाथ : (व्यंग्य से) आप भी बहुत बदले नजर आ रहे हैं।

छेदीलाल : (अपनी छोटी-सी हंसी के साथ) आपका मतलब मेरे लिबास से है।

अमरनाथ : मैंने तो हमेशा आपको धोती कुर्ते में देखा था···

छेदीलाल : जी हां, जी हां···पर अमरनाथ जी, वक्त बहुत बदल गया है, 'नाउ बिजनैस डिमांड्स प्रॉपर पर्सनैलिटी !' मेरा मतलब है कि व्यापार में अब व्यक्तित्व का बहुत बड़ा स्थान है। और एक बात बताऊं···(जैसे भीतर-भीतर प्रसन्नता से भरे जा रहे हों) मैंने एक स्टैनो भी रख ली है। बड़ी जमाऊ लड़की है···जिस दिन से स्टैनो रखी, बस उसी दिन से लिबास भी बदल लिया··· इस लिबास की बात ही और है···आप विश्वास कीजिए, अंग्रेजो में बड़ी-बड़ी खासियतें थी···

अमरनाथ : जी।

छेदीलाल : एक खासियत मैंने बताई नारे की। दूसरे महायुद्ध के समय अंग्रेजो ने 'वी फॉर विक्टरी' (V for Victory) का नारा देकर लड़ाई का पासा पलट दिया। कहां मैदान हाथ से निकला जा रहा था, कहां मैदान मार लिया···गलत कह रहा हूं (हंसते हैं)

अमरनाथ : तो आपने बिजनैस मे नारे का फायदा कैसे उठाया ?

छेदीलाल : ये लम्बी दास्तान है···आपको एक नमूना दिखाऊं···

इधर देखिए···हां हां पर्दा हटा लीजिए···उधर वह घड़ी के पास दफ्तर की दीवार पर···(कुर्सियां खटकती है)

अमरनाथ : मुझे नहीं दिखाई पड़ता···

छेदीलाल : (जोर-जोर से घंटी बजाते हुए चीखते हैं) चपरासी··· जगनू।

जगनू : जी हजोर··· (पीछे से आवाज़ देता है।)

छेदीलाल : (परेशान से) अमरनाथ जी एक मिनट···मैं जरा इधर का मामला ठीक कर लू···चपरासी···

जगनू : जी हजोर (आकर)

छेदीलाल : मेम साब को बुलाओ (गुस्से से) बोलो फौरन इधर आयें···(हांफते हैं)

जगनू : जी हजोर···मेम शाब नहीं हैं हजोर !

छेदीलाल : (उसी तैश में) वर्मा बाबू को बुलाओ···

जगनू : जी हजोर, वर्मा शाब भी नहीं है···

छेदीलाल : कहां है सब लोग···देख कर आओ···जाओ···

जगनू : बहुत अच्छा हजोर···(जाता है।)

छेदीलाल : देखा आपने अमरनाथ जी···मैं तो इन नये छोकरे छोकरियों की वजह से परेशान हूं···जब देखिए तब कुर्सी खाली और टाइपराइटर बन्द।

अमरनाथ : स्टैनो के पास काम नहीं होगा···

छेदीलाल : वाह ! इसका क्या मतलब। मैंने कह रखा है कि काम न भी हो तो भी टाइपराइटर की आवाज़ बराबर आनी चाहिए···

जगनू : (भीतर आकर) हजोर···वर्मा शाब मेम शाब के साथ चाह पीने सामने होटल में गये हैं···

छेदीलाल : (बात संभालते हुए) ओह, भूल ही गया···अच्छा अमरनाथ जी···हैं···हैं···मैं सब को चाय पीने की

छुट्टी देता हूं, देना चाहिए न''' (बात बदल कर) ओ''' आपको वह नारा दिखाऊं''' (घंटी बजाता है) जगनू। वो नारे वाली तख्ती उतार कर ला।

जगनू : बहुत अच्छा हजोर'''

छेदीलाल : ये नारे की तख्तियां मैंने आफिस भर में लटकवा दी हैं। जिधर नज़र घुमाइए उधर ही नारे नज़र आयेंगे''' हैं'''हैं'''

जगनू : (आकर) हजोर ले आया (तख्ती को जैसे बड़े जोर से फूकता है धूल साफ करने के लिए)

छेदीलाल : (घंटी बजाकर और चीख कर) अबे जगनू के बच्चे, उधर मुंह करके धूल फूक धूल आती है। (कपड़े झाड़ने का स्वर) सब सर पर फूक दी, बदतमीज (खांसते हैं) ला इधर ला''' (प्रसन्न होकर) हूं'''इसे पढ़िए अमरनाथ जी'''यह है मेरा नारा।

अमरनाथ : (पढ़ने के अंदाज में) ईमानदारी व्यापार का आधार है! वाह साहब वाह। कितना अच्छा असूल है आपका।

छेदीलाल : (प्रसन्न होकर) अब लीजिए आप मुझसे बिजनेस गुरुमंत्र।

अमरनाथ : (व्यंग्य से) बताइए।

छेदीलाल : तो सुनिए'''व्यापार की साख दो बातों पर है'''एक ईमानदारी और दूसरी, चतुराई। समझे आप।

अमरनाथ : (समझते हुए) पहली ईमानदारी और दूसरी चतुराई। यह आपने खूब बताया लेकिन'''

छेदीलाल : (बात काट कर) समझिए'''इसे समझिए'''पहली बात यह है कि सबसे बड़ी चीज है ईमानदारी और ईमानदारी का मतलब है कि जो वादा कीजिए उसे पूरा कीजिए'''

अमरनाथ : लेकिन व्यापार में'''

छेदीलाल : (बात काटकर) पूरी बात सुन लीजिए'''हूं, तो जो वादा कीजिए उसे पूरा कीजिए और दूसरी बात मैंने आपको बताई'''चतुराई। इस चतुराई का मतलब यह

कि कभी कोई वादा मत कीजिए (हंसते हैं)

अमरनाथ : (हंसकर) यह खूब बताया आपने।

छेदीलाल : (घंटी बजाकर आवाज़ भी लगाते हैं) जगनू।··· चपरासी।

जगनू : जी हजोर।

छेदीलाल : इस तख्ती को टांग आओ।

जगनू : बहुत अच्छा हुजोर। जाते समय प्लाइवुड की दीवार से टकराता है।)

छेदीलाल : अबे देख के···

अमरनाथ : (कुछ रुक कर) यह आपने अपना चपरासी, क्या नाम है उसका···जगनू···यह बड़ा असगुनिया रखा है। यह तो मेंड़ा है—डेढ़ आंख का!

छदीलाल : असगुनिया। वाह भाई वाह···यह चपरासी ही दफ्तर का सब से बड़ा सगुन है। (भेद भरे स्वर में धीरे से) ज्यादातर चपरासी लोग ही दफ्तरों में चोरियां करते हैं।

अमरनाथ : यह मेंड़ा चपरासी चोरी नही करेगा, इसका क्या सबूत।

छदीलाल : सबूत (हंसते हैं) इसका एक बहुत बड़ा फायदा है। हमारे यहां पहले दो बार चोरी हुई। दोनों बार नये चपरासी थे। पुलिस में रिपोर्ट की तो हमेशा गलत आदमियों को पकड़ कर लायी···अब यह गलती नही हो सकती। जगनू का हुलिया बताने में आसानी रहेगी और शायद पुलिस भी धोखा न खाये···कम से कम पचास फीसदी फायदा मिलेगा शिनाख्त करने में!

अमरनाथ : (उनके तर्क पर हंसकर) तो यह कहिए कि पुलिस के काम को आसान करने के लिए आपने मेंड़ा चपरासी रखा है।

छेदीलाल : एक फायदा और है। यह दफ्तर के सब बाबुओं पर निगाह रखता है, पता किसी को नहीं चलता…समझे आप। (हंसते हैं।)

अमरनाथ : आपकी सूझ-बूझ का मैं कायल हो गया छेदीलाल जी…अच्छा अब आज्ञा दीजिए, चलूं। (कुर्सी सरकने का स्वर)

छेदीलाल : अरे बैठिए भी। कहां आपका रोज-रोज आना होता है। बस एकाध काम करके आपके साथ चलता हूं। (घंटी बजाकर) जगनू…जगनू।

जगनू : जरा मेम साब को बुलाना (हड़बड़ाकर कुर्सी से उठने का स्वर) ओह टाई कहां गयी ''यही कील पर टांगी थी, जरा उधर देखिएगा अमरनाथ जी, फाइलों के पीछे गिर तो नहीं गई…

स्टैनो : (भीतर आकर) यस प्लीज। (जूतों की खट पट)

छेदीलाल : (घबराहट में) जी…हां…अभी आप जाइए, एक मिनट बाद आइए…जाइए…जाइए…

(फाइलों को सरकाने की आवाज आती रहती है।)

अमरनाथ : यहां तो टाई है नहीं, पर आप इतना घबरा क्यों रहे हैं (फाइलें पटक देता है।)

छेदीलाल : स्टैनो से हमेशा प्रॉपर ड्रेस में मिलना चाहिए…मैं इस बात का खास खयाल रहता हूं…(झुंझलाकर) आया था तो टाई यही कील पर टांग दी थी…

अमरनाथ : अरे…वह तो आपके गले में हैं।

छेदीलाल : माफ करना भई मैं भी कितना परेशान हो जाता हूं (आराम की सांस लेकर टाई कसते हुए ऊंचे स्वर में) देखिए ठीक कस गई है…

अमरनाथ : बिल्कुल।

छेदीलाल : (आराम के साथ) आल राइट नाउ ! (घंटी बजाकर) जगनू···मेम साब को बोलो, आ सकती हैं। अमरनाथ जी जरा यह फाइल मुझे पकड़ा दीजिए···जी···नीली वाली···जी···यही··· (उस पर हाथ पटक कर झाड़ते हैं)

स्टैनो : यस प्लीज । मैं आ सकती हूं (ऊंची हील के जूतों की खट पट)

छेदीलाल : श्योर···श्योर···हां देखिए···यह कान्फीडेंशल लैटर है, अभी टाइप करके दीजिए···देर नहीं मांगता।

स्टैनो : यस सर···अभी करेगा (खट-खट करती जाती है)

छेदीलाल : देखा आपने अमरनाथ जी···देखा आपने (परेशानी से) उफ्···यह (पर्दा उठाके देखना)

अमरनाथ : आप तो पर्दा उठाकर देख लेते हैं, मैं कैसे देखूं।

छेदीलाल : उफ्···अगर आप देखते···(स्वर बिगड़ जाता है) मैं कहता हूं यह सब···

अमरनाथ : हुआ क्या ?

छेदीलाल : वह नया क्लर्क है न वर्मा···जो अभी स्टैनो के साथ चाय पीने गया था···

अमरनाथ : हूं···तो···

छेदीलाल : (जैसे मुह का जायका बिगड़ गया हो) यह स्टैनो की तरफ देखकर मुस्कराता है···जब भी स्टैनो यहां से निकलती है, वह इशारे करता है और बेहूदगी से मुस्कराता है···मेरी समझ में नहीं आता···

(पीछे केबिन से टाइपराइटर की आवाज आने लगती है)

अमरनाथ : अब तो स्टैनो साहबा टाइप कर रही हैं···

छेदीलाल : हूं। (घंटी बजाकर) जगनू।

(पीछे से आवाज आती है···जी हजोर)

छेदीलाल : खजांची को बुलाओ।

अमरनाथ : अच्छा छेदीलाल जी, अब तो मुझे आज्ञा दीजिए…

छेदीलाल : मैं भी चलता हूं…आप शायद घबरा गये…पर इससे क्या होता है। अभी तक मैंने व्यापार के लिए नारा दिया था सो व्यापार ठीक चलता रहा, अब मैं दफ्तर के काम के लिए नारा दूगा, बस समझिए कि सब ठीक हुआ। नारा दिया नही कि गाड़ी पटरी पर आई।

जगनू : (भीतर आकर) हजोर।

छेदीलाल : क्या है।

जगनू : खजांची बाबू कहते हैं कि रोकड़ मिला कर आ रहा हूं।

छेदीलाल : अच्छा, पानी लाओ। आप पानी पीजिए अमरनाथ जी।…आप देखिएगा कि मैं कैसे सब काम ढर्रे पर लाता हूं। मैं हार नही सकता…यह कल के लड़के मुझे चलायेंगे भला ‥ (बड़बड़ाते जाते हैं) यह साला क्लर्क वर्मा…

(गिलासो की खनक)

जगनू : हजोर पानी।

छेदीलाल : इधर देखो मेरी तरफ। मैंने कितनी बार तुमसे कहा है कि पानी हमेशा प्लेट में रख कर लाया कर जाओ प्लेट में रखकर लाओ…जाओ…

अमरनाथ : छेदीलाल जी वह टाइपराइटर बन्द हो गया। सुनिए…जरा

(एक क्षण का पाज…सन्नाटा)
(कुर्सी खिसकने की आवाज और पर्दा सरसराता है)

छेदीलाल : और कुर्सी भी खाली है।

अमरनाथ : किसकी।

छेदीलाल : वर्मा की।

(जगनू के भीतर आने का संकेत और प्लेटों की झनकार प्लेटे मेज पर रखी जाती हैं। अमरनाथ ठहाका लगाता है)

छेदीलाल : अबे। अबे। ओ जगनू के बच्चे···ये क्या है ?

जगनू : (सहमते हुए) हजोर प्लेट मे पानी है। आप ही तो कह रहा कि···

अमरनाथ : (हंसते हुए बात पूरी करता है) कि प्लेट मे पानी लाया कर···

जगनू : (सहारा पाकर) हां हजोर : पानी पीने के लिए चम्मच दें हजोर।

छेदीलाल : हजोर का बच्चा, हटा इन्हें यहां से (तैश में हाथ मार देते हैं तो प्लेटें गिर कर टूट जाती हैं···क्षणिक पाज) मेरी समझ में नहीं आता कि इन सिरफिरों की मैं क्या दवा करूं। साला दफ्तर का रवैया बिगड़ गया है··· (जैसे अपने को समझा रहे हों) खैर···खैर···आइए अमरनाथ जी आपको अपना गोदाम दिखाऊं।

(कुर्सी खिसकने और बाहर निकलने का स्वर दफ्तर का वातावरण—खजांची जोड़ मिला रहा है और दूसरी तरह का शोर भी है)

छेदीलाल : जरा अमरनाथ जी···हैं···जरा घंटी उठा दीजिए मेज से। (पज़ा) आइए···यह रहा दफ्तर।

(खजांची और जोर-जोर से रोकड़ मिलाना शुरू करता है)

छेदीलाल : यह इन बाबू को देख रहे हैं, ये रामानंदी तिलक वालों को। ये हैं हमारे बाबू रामदास। हमारे खजांची··· (खजांची को डांट कर पूछते हैं) आपकी रोकड़ मिली।

खजांची राम० : जी मिला रहा हूं।

छेदीलाल : कितना है इस वक्त कैश बक्स में।

रामदास : (पान का पीक चूसते हुए) जी, चार हज्जार तीन सौ पांच रुपया चौहत्तर नया पैसा···

छेदीलाल : (डांटकर) ओह हेर-फेर?

रामदास : साढ़े तीन हज्जार का है सरकार। (आवाज़ डूबी हुई है)

छेदीलाल : देख रहे हैं अमरनाथ जी। साढ़े तीन हजार का गोलमाल है···

अमरनाथ : यह तो बहुत बड़ी रकम है।

छेदीलाल : खजांची बाबू। मैं आप पर इत्मीनान करता था, इसीलिए रोज रोकड़ नहीं मिलाता था···लेकिन आपने ···लेकिन आपने···(तुतलाने लगते हैं)

रामदास : (बात काटकर) सरकार! यह रुपया बहुत दिनों का हो गया है कुच्छ पता नहीं चलता कहां गया। इत्ता मगज मार रहा हूं, इत्ता मगज मार रहा हूं···

छेदीलाल : (हाथ में ली हुई घंटी बजाकर) जगनू। पानी लाओ··· (पाज) हूं तो यह गलियारे में खड़ी नयी सायकिल आपकी है न खजाची बाबू।

रामदास : (नम्रता से) जी सरकार।

छेदीलाल : और आपके चेहरे पर चमक भी आ गई है।

रामदास : (उसी नम्रता से) जी सरकार!

छेदीलाल : (सूंघकर) और अब सर मे कड़वे तेल की जगह अंग्रेजी तेल महक रहा है।

रामदास : (और अधिक विनम्रता से) जी सरकार।

छेदीलाल : (तैश मे) यह सब गुलछर्रे कहां से उड़ रहे हैं। (हाथ में ली हुई घंटी तैश मे बजा जाते हैं) मैं पूछता हूं यह सब किस के पैसे से हो रहा है। कान खोलकर सुन लीजिए··· दफ्तर बन्द होने तक पाई-पाई पूरी होनी चाहिए नहीं

तो आपकी नौकरी सलामत नहीं है···समझे।

रामदास : (नम्रता से) सरकार।

छेदीलाल : इस सरकार वरकार से कुछ नही होगा·· समझा···

रामदास : *(बहुत विनम्रता से) सरकार···आप हमें निकाल कर नया खजांची रखेंगे तो फिर इतने का ही दण्ड पड़ेगा··· अब हमसे बेफिकर रहें सरकार।*

छेदीलाल : क्या मतलब।

रामदास : यही सरकार···कि अब मेरी सब जरूरतें पूरी हो गई हैं।

जगनू : हजोर पानी।

(गुस्से में गट-गट पानी पी जाते हैं और गहरी सांस लेते हैं।)

छेदीलाल : मैं कुछ नहीं जानता। आज पाई-पाई रोकड़ मिल जानी चाहिए, समझा···

(बात पूरी नही हो पाती कि स्टैनो और वर्मा के आने की और आपस में फुसफुसाकर बातें करने की आहट)

अमरनाथ : *(धीरे से फुसफुसाकर) वो आपकी स्टैनो और वर्मा आ गए···*

छेदीलाल : देख रहा हूं (गुस्से से) वर्मा बाबू।

वर्मा : जी। (स्टैनो खुट-खुट करती चली आती है)

छेदीलाल : आप निहायत गैर जिम्मेदार आदमी है और इस तरह···

वर्मा : (अपटूडेट होने के रोब में) मैं अपना काम खत्म कर चुका हूं। सेठ जी···कोई काम पेंडिंग नही है!

छेदीलाल : काम खत्म कर लेना और जिम्मेदारी समझना···ये दोनों कतई अलग बातें हैं। मेरे ख्याल से आप इसीलिए

किसी आफिस में नहीं टिक पाते कि आप जिम्मेदारी नहीं समझते।

वर्मा : टिकने न टिकने की बात दूसरी है पर जहां तक जिम्मेदारी का सवाल है···

छेदीलाल : वो मैं देख रहा हूं।

वर्मा : तो आप खुद देख ही रहे हैं तो समझ भी सकते हैं (बहुत सीधेपन से)

छेदीलाल : मैं जवान लड़ाना पसन्द नहीं करता···आइए अमरनाथ जी···(हाथ की घंटी बजाकर)जगनू। मेरे आफिस का पर्दा उठाओ···

(अमरनाथ और छेदीलाल के भीतर जाने का आभास। कुर्सियां सरकती हैं और वे बैठते हैं।)

छेदीलाल : (मेज पर हाथ पटक कर) सब मुफ्त का पैसा चाहते हैं, कोई भी काम नहीं करना चाहता।

अमरनाथ : दुनिया बहुत बिगड़ गयी है।

छेदीलाल : इतना काम रुका पड़ा है और मेरे दफ्तर में गुलछर्रे उड़ रहे हैं। मैं एक दिन में सबको ठीक कर सकता हूं लेकिन मैं तो सिर्फ अपनी समझदारी में मार खा रहा हूं।

अमरनाथ : यह जमाना भलाई का है ही नहीं।

छेदीलाल : अब आपने देखा, कितनी देर हुई खत को टाइप के लिए दिये हुए, पर मिस साहबा होटल में घूम रहीं हैं। मेरी समझ में नहीं आता···

स्टैनो : (उस पार से) मैं अन्दर आ सकती हूं!

अमरनाथ : वो आ गई···टाई आपकी···

छेदीलाल : मेरे खयाल से ठीक है···बस···आप अन्दर आ सकती हैं।

स्टैनो : जी यह लैटर हो गया। (कागज फड़फड़ाता है)

छेदीलाल : हूं···! (कागज उसके हाथ में फड़फड़ाता है और बुद-बुदाकर पढ़ने-सा लगता है···कि उसका पारा चढ़ रहा है) यह क्या टाइप किया है आपने··· (पढ़ता है) विद रिफरेंस टु योर···योर माई लव···माई लव···माई स्वीट हार्ट आई कैन्नाट लिव विदाउट यू। आई लांग फार यू। (गुस्से में कागज मरोड़ देने का संकेत) वॉट नानसेंस। यह सब क्या बकवास है। यह प्रेम पत्र टाइप किया है या···

स्टैनो : जी···जी···वो···

छेदीलाल : आपका दिमाग कहां रहता है। मैं पूछता हूं आपने यह क्या टाइप किया है···जो मैंने लिखकर दिया था उसे पढ़ा भी नहीं जा सकता क्या ? मैं···मैं···

स्टैनो : जी, मैंने वही तो टाइप किया है जो आपने दिया था···

छेदीलाल : एं। तो मैंने आपको प्रेमपत्र दिया था··· (बिगड़कर पर घबराकर)

स्टैनो : अब मैं क्या कह सकती हूं। आप खुद देख लीजिए। मुझे खुद यह नापसंद है कि आप इस तरह के लैटर्स मुझे टाइप करने के लिए दें। आपने जानबूझकर···

छेदीलाल : देख रहे हैं अमरनाथ जी···आप देखिए जरा इस कागज को···यह ऑफिशल लेटर है या···या···

अमरनाथ : (कागज सीधा करने का संकेत) हूं (एक क्षण रुककर). इसमें गोलमाल है छेदीलाल जी।

छेदीलाल : क्या गोलमाल हो सकता है।

अमरनाथ : एक तरफ पैंसिल से प्रेम पत्र लिखा है और दूसरी तरफ ऑफिशल लेटर···

छेदीलाल : एं! (जैसे गुस्से पर छींटा पड़ जाता है) यह कैसे हो सकता है।

स्टैनो : हो नहीं सकता, हुआ है···और यह प्रेम पत्र आपके हैन्ड राईटिंग में है। आप इस तरह मुझे अपनी ओर मुखातिब

करना चाहते हैं, यह आपकी चाल है।

छेदीलाल : आप जा सकती हैं···!

अमरनाथ : (व्यंग्य से) आप आखिर यह क्या कर बैठे छेदीलाल जी?

छेदीलाल : (अपनी हरकत छुपाते हुए) बड़ी अजीब बात है। वो··· शायद··· स्टैनो और वर्मा की दोस्ती देखकर मनोवैज्ञानिक रूप से मैं प्रभावित हो गया···

अमरनाथ : यह मनोविज्ञान बहुत बुरी बला है।

छेदीलाल : (जैसे सांस लेने का मौका मिल गया हो) नहीं···नहीं ···आपकी यह बात गलत है। मनोविज्ञान के बहुत फायदे हैं। आदमी के जहन का मालिक है मनोविज्ञान।

अमरनाथ : तो दफ्तर के लोगों का जहन ठीक कीजिए। मेरे ख्याल से अब आप एक नया नारा और दीजिए।

छेदीलाल : वह तो देना ही पड़ेगा। नहीं तो काम कैसे चलेगा। इन नारों का एक मनोवैज्ञानिक असर पड़ता है। आदमी के जहन में बात चुभती रहती है। दिखाऊं आपको करिश्मा। (अपनी हंसी हंसते है)

अमरनाथ : जरूर···जरूर।

छेदीलाल : (घंटी बजाकर) जगनू।

जगनू : जी हजोर!

छेदीलाल : दफ्तर के सब बाबुओं को इधर बुलाओ···अच्छा रुको···मैं खुद चलता हूं, आइए अमरनाथ जी।

(आफिस में कुरसियां सरकने और लोगों के खड़े होने का आभास)

रामदास : (फुसफुसा कर) ऐ वर्मा बाबू···साहब। खड़े हो जाइए।

छेदीलाल : (नेता की तरह) दफ्तर के सब बाबुओं से मुझे एक अहम बात कहनी है। आप सब मेरे और नजदीक आ जाइए।

(हल्का-सा शोर)

छेदीलाल : ओह आप स्टैनो साहिबा उधर खड़ी हैं। (चापलूसी के ढंग पर) आप इधर आ जाइए और कुर्सी पर बैठ जाइए। महिलाओं का सम्मान करना हमारा फर्ज है। हां...तो मैं आप लोगों से एक दरख्वास्त है मेरी...मैं कहना चाहता हूं कि दफ्तर की हालत अगर यही रही तो सब चौपट हो जाएगा...मैं आपका ध्यान आज इसी खातिर हिन्दी साहित्य की ओर दिलाना चाहता हूं। हिन्दी में बहुत बड़े-बड़े कवि हुए हैं जैसे तुलसीदास। सुन रहे हैं आप बाबू रामदास। हूं...सूरदास, कबीर-दास, रवीन्द्रनाथ और शैक्सपीर। सुना आपने मिस्टर धीर। खैर...इनमें से शायद शैक्सपीर ने एक दोहा कहा है—

> काल करन्तें आज कर, आज करन्तें अब्ब।
> अवसर बीतो जात है बहुर करेगो कब्ब।

(दोहा सुनकर हल्की-सी हंसी फूटती है।)

छेदीलाल : (नेता की तरह गर्व में) देखा आपने। कितनी बड़ी बात कह दी 'पीर साहब' ने दो लाइनों में। इसका अर्थ है... जो कल करना है सो आज कर, और जो आज करना है सो अभी कर। यही असूल हम व्यापार में भी लागू कर सकते हैं। मैं तो यहां तक कहता हूं कि यह दोहा पीर साहब ने हम व्यापारियों के लिए ही लिखा है। इसलिए भाइयों। (जैसे कुछ याद आया हो) ओह। और महिलाओं! आज का काम कल पर न छोड़ो, उसे आज करो, अभी करो। समझे आप लोग...

(हल्का शोर और हंसी...कुछ स्वर...बहुत ठीक है...बहुत ठीक है।)

छेदीलाल : (घंटी बजा कर) जगनू। औरऐ जोखर्मासह। तुम दोनों नारों की यह पुरानी तख्तियां उतार डालो। (फिर बाबुओं से) तो भाइयों मैं यह पुराना नारा बदल रहा हूं। यह पुराना नारा आज से समाप्त होता है और नया नारा है'''कल का काम आज करो, आज का काम अभी करो।

समवेत स्वर : कल का काम आज करो, आज का काम अभी करो।

(कुछ दबी हुई हंसी भी उभरती है।)

छेदीलाल : ये पुरानी तख्तियां बदल दीजिए और आप सब लोग नया नारा लिख कर नई तख्तियां दफ्तर में लटकाइए। आज और कुछ नही होगा'''सिर्फ नारा बदला जाएगा। (अपनी हंसी हंसते हैं।)

अमरनाथ : मान गए आपको छेदीलाल जी। अच्छा अब चलिए।

(घड़ी के पांच घंटे बजते हैं।)

छेदीलाल : अब देखिएगा आप हुलिया पलट जाएगी दफ्तर की। आइए चलें''' (चलते-चलते) यह नारा आज ही बदल जाना चाहिए।

रामदास : पूरा-पूरा अमल होगा सरकार।

(हंसी उठती है।)

वर्मा : गधा है बिलकुल। आओ डियर। कम आन मेरी!

(सब हंसते हैं।)

रामदास : अपने नारे की करामात देखना चाहता है। हुं'''क्यों वर्मा बाबू।

वर्मा : ऐसी करामात दिखाइए कैशियर बाबू'''कि जिन्दगी भर यह छेदीलाल याद रखे।

रामदास : जरा कैश बक्स संभाल लूं वर्मा बाबू!

वर्मा : (ठहाका लगाकर) जरूर'''जो कल करना हो सो आज

करो···जो आजकरना हो सोअभी करो···क्या ख्याल है रामदास जी। कुछ हिस्सा अपना भी रहेगा न इस माल में?

(दफ्तर में खूब ठहाके और शोर मचता है।)

रामदास : इस भेंड़े जगनू को भगाया जाय।···अबे ऐ जगनुआ, जा तुझे साहब घर बुला गए हैं। चाबी हम पहुंचा देंगे···

वर्मा : भाग बे···जा जल्दी से···(स्टैनो से) यस डार्लिंग···

स्टैनो : यह टाइपराइटर भी···

वर्मा : और क्या, यह भी हमारे साथ जाएगा···नारा है जो कल करना है सो आज कर···

(दफ्तर में उठाने धरने का शोर। कैश बक्स से रुपया पलटने का आभास और खूब हंसी कहकहे ··तथा बीच में सुनायी पड़ता है। कल का काम आज करो, आज का काम अभी···!)

वर्मा : हां-हां, बिलकुल अभी···इसी वक्त। (ठहाका लगाता है)

(स्टैनो खिलखिलाती है और सब भी हंसते है। सायकिल की घंटी टुनटुनाती है।)

रामदास : हां, हां, ठीक है जोरावर सिंह। सायकिल। ठीक···

(शोर शराबे का माहौल धीरे-धीरे फेड आउट।)

(क्षणिक अन्तराल)

(घड़ी दस के घंटे बजाती है···एकदम सन्नाटा है।)

छेदीलाल : (आने का आभास) अब आज चलकर दफ्तर का रंग देखिए अमरनाथ जी। मशीन की तरह काम हो रहा

होगा। (वही अपनी हंसी हंसते हैं)

अमरनाथ : आपने नया नारा जो दिया है।

(जीना चढ़ने का आभास)

छेदीलाल : दफ्तर में कितनी शांति छाई हुई है। नहीं तो यहां जीने तक चीख पुकार की आवाजें आती थीं।

अमरनाथ : हूं...सचमुच बड़ी शांति है, आज तो आपके दफ्तर में...सब लोग मन लगाके काम कर रहे हैं!

जगनू : (भागकर आने का संकेत घबराये स्वर में) हजोर। हजोर!

छेदीलाल : क्या बात है जगनू। क्या बात है?

जगनू : हजोर सब चौपट हो गया।

छेदीलाल : (लपकते का आभास) क्या बात है...है। दफ्तर में कोई नहीं। यह क्या हाल है। और यह दफ्तर की हालत। (चीखते हैं) जगनू। कहां हैं सब लोग।

अमरनाथ : यह माजरा क्या है...यह दफ्तर जैसे लूट लिया गया है...

छेदीलाल : जगनू।

जगनू : (डर और घबराहट में) हजोर, जब हमने सुबह आठ बजे सफाई के लिए दफ्तर खोला तब यही हाल था।

छेदीलाल : ऊपर जाकर स्टैनो साहिबा को बुलाओ फौरन।

अमरनाथ : वो यहीं रहती हैं।

छेदीलाल : हां, यहीं ऊपर की मंजिल में एक कमरा लेकर रहती हैं। (जगनू को) खड़ा क्या देख रहा है, स्टैनो साहिबा को बुलाओ फौरन।

जगनू : (हकलाते हुए) वह तो कमरा छोड़कर चली गईं।

छेदीलाल : क्या बकता है?

जगनू : हम दफ्तर की हालत देखकर ऊपर गये थे हजोर...पता लगा कि वो वर्मा साब के साथ...रात को ही चली

गई...

छेदीलाल : (समझ कर) ऐ। कल आफिस बन्द किसने किया था।

जगनू : (डर कर) हजोर खजांची बाबू बन्द करके चाबी पहुंचा गए थे हमारे पास, हमने हजोर की कोठी पर चाबी पहुंचाई...

छेदीलाल : इसका मतलब...हाय...मैं लुट गया अमरनाथ...मैं लुट गया... (बदहवास की तरह दौड़ते हैं दफ्तर में कैश बक्स उठाने और जमीन पर गिरने की ध्वनि) कैश बक्स खाली है...और दीवार की घड़ी.. हाय वह भी नहीं।

जगनू : हजोर टाइप मशीन भी नही है।

छेदीलाल : हाय मैं मर गया...(आवाज भर्राने लगती है) हाय बदमाशों ने तबाह कर दिया...मुझे संभालो...

(कुर्सी में गिर पड़ते हैं।)

अमरनाथ : उन्होंने शायद नये नारे पर अमल किया...जो जिसके मन में था...जिसकी जिस चीज पर आंख थी, वही ले उड़ा...जो कल उड़ाना चाहता था, वह आज ही...

छेदीलाल : (भर्रायी आवाज) हाय मैं मर गया...

अमरनाथ : (घबराकर) ओ जगनू...ये बेहोश हो गए...जल्दी से पानी ला...और जरा पंखा चला।

जगनू : (घबराहट में) पंखा कहां है हजोर—वो पंखा भी उतार ले गए...

अमरनाथ : अरे पंखा नही है तो वह नये नारे वाली तख्ती ही उतार दे, जल्दी से, हवा तो करें।

(छेदीलाल बड़बड़ाते रहते हैं...'हाय मैं लुट गया लुट गया' अमरनाथ और जगनू चीखते रहते हैं...अपने को संभालिए हजोर संभालिए...)

(फेड आउट)

अवधि : 25 मिनट

उद्देश्यमूलक कार्यक्रम

नाता-रिश्ता और सुक्खू का संसार

(नाता-रिश्ता और सुक्खू का संसार—ये दोनों कार्यक्रम ग्रामीण भाइयों के लिए थे—'चौपाल' में ब्राडकास्ट के लिए, 'चौपाल' का एक निश्चित उद्देश्य था, और हमें ऐसे कार्यक्रम तैयार करने पड़ते थे जो एक ओर तो किसान भाइयों को खेतीबारी के बारे में नये बीज, खाद तथा नये औजारों की जानकारी दें और दूसरी तरफ जमींदारी उन्मूलन से जो सामाजिक और आर्थिक समस्याएं पैदा हुई हैं—उनका यथासम्भव समाधान करने के लिए उन्हें प्रेरित करें।

यह जमाना वह था जब अपने देश में 'हरित-क्रांति' की जबरदस्त भूमिका तैयार की जा रही थी और ग्रामीण-जीवन की सारी संकुलता और अजानकारी की सीमाओं को तोड़ने का बीड़ा उठाया गया था।

हालांकि ग्रामीण भाइयों के लिए प्रसारित किये जाने वाले कार्यक्रमों का हमेशा मजाक उड़ाया जाता था, पर इन उद्देश्य-मूलक कार्यक्रमों ने बड़ी भूमिका निभाई है—ग्रामीण विकास में।

नाता-रिश्ता एक निश्चित थीम पर तैयार किया गया नाटक है—ऐसे 'मेड-टु-आर्डर' कार्यक्रम सीधे-सीधे प्रोपेगण्डा की शर्तें पूरी करते हैं

और किसी भी विकसित होते देश के लेखक को इन्हें लिखने से शरमाना नहीं चाहिए। यह उसकी साहित्यिक नही, आंशिक सामाजिक जिम्मेदारी है।

'सुक्खू का संसार' एक धारावाही-पाक्षिक कार्यक्रम था जो लगभग डेढ़ वर्ष तक चलता रहा—सन् 58-59 में। इस रचना के केवल 3 भाग दिये जा रहे हैं, यह जानकारी देने के लिए यह और ऐसे उद्देश्यपरक कार्यक्रम क्यों और किन बातों को ध्यान में रखकर लिखे जाते हैं। ऐसे कार्यक्रमों के नायक कभी-कभी तो श्रोता वर्ग के नायक बन जाते हैं और श्रोता उनसे सार्थक बातें ग्रहण करने लगता है।

सुक्खू भी अपने प्रसारण क्षेत्र के श्रोताओं का नायक बन गया था—और किसान भाइयों के गांवों-चौपालो का जीता-जागता सदस्य भी। धारावाही कार्यक्रमों के हर भाग का अंत एक महत्वपूर्ण रचनात्मक शर्त होती है—जिससे सुनने वालो की उत्सुकता को जीवित रखना पड़ता है। शुरू के पहले कार्यक्रम में पात्रों की स्थापना एक मुश्किल काम होता है और आने-जाने, बर्तन उठाने तक को शब्दों में कहलाना पड़ता है—जो भद्दा भी लगता है पर करना पड़ता है। हर बार घुमा-फिरा कर ऐसा वाक्य बनाना पड़ता है जिसमें पात्र का नाम रिपीट होता रहे—और जब एक बार श्रोता नामो, आवाजों और वातावरण की ध्वनियो से परिचित हो जाता है तब धारावाही कार्यक्रम रचनात्मक रूप लेने लगते हैं।)

नाता-रिश्ता

(पृष्ठभूमि में शोर हो रहा है। कई लोग फुसफुसा रहे हैं। उसी के बीच जमींदार का स्वर सुनायी पड़ता है।)

जमींदार : तुम लोग यह न समझो कि जमींदारियां चलीं गयीं तो मनमानी करोगे। मैं एक-एक को देख लूंगा। अदालत में नाक रगड़वा दूंगा।

हरखू : ई कैसन बात करत हौ सरकार। ई खयाल हमं लोगन की तरफ से ना लाई चाहीं, सरकार!

जमींदार : मैं एक-एक को जानता हूं। तुम लोगों का कलेजा बढ़ गया है, नही तो इतनी हिम्मत पड़ती। चार महीने के लिए मैं लड़के के पास चला गया तो तुम लोगों ने हवेली मे लूट मचा दी। तुम समझते हो मैं शहर में बस गया हूं तो सब चौपट कर दो···दरवाजे-खिड़कियां निकाल ले जाओ! कहा है मथुरा?

मथुरा : हा, बाबू जी!

जमींदार : ये सब तेरी हरकत है। मेरी दया-धरम का यह बदला दिया है तूने?

मथुरा : बाबू जी, हमने चौकसी रखी, लेकिन चोर तो चोर है।

जमींदार : मुझे तुम लोग सच-सच बताओ। थान की नांदें कौन खोद ले गया। हवेली के पिछले दरवाजों की जोड़ियां किसने उतारी हैं?

हरखू : ई पता होता तो...

ज़मींदार : कोई मुझसे बच के नहीं जा सकता। फ़ौजदारी में एक-एक को बंधवा दूंगा। इस वक्त कैसे खामोश बने बैठे हैं सब के सब। ज़मीदारियां खत्म हुई है, पर ज़मींदार अभी जिंदा हैं!

हरखू : बड़ी उमरि होय सरकार की। जुग-जुग जियें।

ज़मींदार : (तैश में) तुम लोगों की चालाकी मैं खूब जानता हूं। मैं नस-नस पहचानता हूं। इन मीठी-मीठी बातों से मुझे बहकाना चाहता है नालायक!

हरखू : लाज़बान न बोलें, सरकार!

मथुरा : बाबू जी गम करें, हम सब पता लगायेंगे।

ज़मींदार : जब यहां पड़ा सोता रहा तब नहीं किये-धरे कुछ हुआ। अब पता लगाएगा। तुम लोग सब कान खोल कर सुन लो। जिस-जिस पर मेरा बकाया निकलता है वह सब कल तक वसूल हो जाना चाहिए। मैं मालगुज़ारी भरता रहा। तुम लोगों को परेशान नहीं किया। निचोड़-निचोड़ कर वसूल करता तो पता चलता। और आज मेरे ही साथ ऐसा सलूक। जिसने ढांक-तोप कर रखा उसी को लूटते चुल्लू भर पानी में नहीं डूब मरे?

मथुरा : गुस्सा न करे, बाबू जी! आप हमारे लिए बदल थोड़े ही गए। ज़मीदारी चली गई तो हमारा-आपका नाता-रिश्ता नहीं टूट गया। आपकी बिपत-मुसीबत, हमारी दुखीहारी एक है, बाबू जी! आपका नुकसान हमारा है... (भीड़ की ओर) अरे बोलो न, भाई! नांदे किसने उखाड़ी हैं...किवाड़ों की जोड़ी कौन ले गया है?

हरखू : अरे कौनहु जानै तो बोले, अइस कौन आपन नाम धराय देइ।

जमींदार : तो ठीक है ! मैं एक-एक को देख लूंगा !

(एक क्षण का अन्तराल—फिर कुछ कागज निकालने और उन्हें पलटने का स्वर। कुछ भुन मुना कर पढ़ना, फिर स्पष्ट स्वर।)

जमींदार : कहा है बोधन ?

बोधन : ई है सरकार !

जमींदार : तुझ पर पैंतीस रुपया निकलता है। यह न समझना कि इन्हें वसूल नही कर पाऊंगा। तीन साल की बकाया के दावे अभी चल रहे हैं।

स्वर : कौनहु, इनकार होय मालिक तो कोरट-वोरट की बात करें…

जमींदार : और मथुरा तुम। तुम पर दो सौ बकाया है।

हरखू : सरकार, मथुरवा तो आपहि के घर-मां नौकरी करत-करत बुढ़ाय गवा।

जमींदार : तुम चुप रहो, हरखू। ये सब इसी की बदमाशी है। इसे नही छोड़ सकता। मैंने सोचा था कि बरसा-बंदी में कहा उस छप्पर में पड़ा रहेगा, इसलिए हवेली में पड़े रहने को कह गया—ये अब क्या देगा रुपया ? मेरे यहां नौकरी करता रहा, यह सबने देखा है। पर कितना कर्जा इसके बाप को दिया था, यह किसी ने नहीं देखा।

(तभी भीड़ का हलका शोर…भुनभुनाने का)

हरखू : (शोर में से ही बोलता हुआ) ई अन्याय है, बड़े सरकार !

जमींदार : तो अपना रुपया छोड़ दू। यह हवेली भी इसी के लिए छोड दू ?…यही चाहते हो सब लोग ? यही तुम्हारा नेम-धरम है ? कल तक पूंछ दबती थी तो कैसे भीगी बिल्ली की तरह चले आते थे, और आज यह हिम्मत कि मेरे न्याय को अन्याय कह रहे हो ?

(भीड़ का शोर बढ़ जाता है। लोग जमींदार की बात को जैसे बर्दाश्त नही कर पाते। कुछ क्षणों तक फुसफुसाहट और शोर होता रहता है। एकाध गर्म स्वर। अरे, सारे का मारि के भगाय देय! अब आवा है वसूली करै।…जौन मन में होय करके देख लै…' जमींदार इन स्वरों को सुन कर फुफकार रहे हैं।)

जमींदार : अब मेरे साथ ऐसा सलूक? ठीक है! लेकिन मथुरा इनकार कर जाए कि उसे मेरा रुपया नहीं देना है। मैं भी आदमी की जात परख लू। बोल, मथुरा!

मथुरा : जो देना है बाबू जी, उससे मुकर जाऊं तो असिल की औलाद नहीं, पर इस बखत मजबूरी है। हाथ मे एक पैसा नही। बरखा मे बीज सड़ गया, मालिक! उसका इंतजाम जरूरी है। आपका रुपया भी धीरे-धीरे चुकायेंगे।

जमींदार : चुकायेंगे नही, तुझसे तो अभी वसूल करना है।

मथुरा : (दीनता से) अभी तो बस यह कपड़ा-लत्ता है, बाबू जी! आपके जूता झारै के काम आ जाएगा। और तो पाई नहीं। मुहलत दें सरकार। इनकार नही करता। इस जन्म का बोझ उस जन्म के लिए नही ले जाऊंगा।

जमींदार : नकद तो दे चुके तुम इस जनम में। इतनी बदमाशियों के बाद मुझसे रहम की उम्मीद करते हो!

मथुरा : मजबूरी है, बाबू जी! नही तो…

जमींदार : तो अपनी गाय खोल दो। सब चुकता। आने पाई की रसीद लो और गाय मेरे हवाले करो।

मथुरा : बाबूजी, गइया तो…

जमींदार : न देने के सैकड़ों बहाने हैं। रुपया मारना चाहते हो तो सीधे इनकार करो न।

हरखू : ई अन्याय है, बड़े सरकार! सरासर अन्याय है। कल तक आपकी परजा रहिन, अब परजा मनई के साथ कुछ रियायत बरतै के चाही, सरकार!

मथुरा : (भरी आवाज़ में) ईमान पर अविश्वास न करें, बाबू जी!

ज़मींदार : तो और क्या समझूं? जब चीज़ तुम्हारे पास है और देना नहीं चाहते तो और क्या समझूं? पागल नहीं हूं।

हरखू : (कुछ मिन्नत से) आप रिसियान हैं। बड़े सरकार!

मथुरा : (भरे कंठ से) तो ले जाएं, सरकार! गइया ले जाएं···

(भीड़ का शोर बढ़ जाता है। मथुरा के जाने का स्वर। लोग इस अन्याय पर फुसफुसा रहे हैं। ई कौनहु बात है भला! कल को कहिहैं बचवा हमरे हवाले करो···' ओ को रोको, बंसी···')

(क्षणिक अंतराल)

(कदमों की आहट उभरती है। शोर थम जाता है। गाय के खुरों की आवाज़। मथुरा पुचकारता हुआ गाय ले आता है। ला कर चुपचाप खड़ा हो जाता है। गाय अपने खुरों पर हिलती-डुलती रहती है। शोर बढ़ जाता है। सब स्वरों में करुणा और किसी-किसी में प्रतिरोध की ध्वनि है। एक स्वर स्पष्ट सुनायी पड़ता है।

स्वर : अब सरकार पसीज जाएंगे। गऊ माता सामने है। (जमींदार साहब जैसे कुछ ठीक से सोच न पा रहे हों। कागज़ों को उलटते-पुलटते रहते हैं। उधर जैसे देखते ही नहीं। कागज़ उलटने की आवाज़)

मथुरा : गइया लै आया, सरकार! (स्वर में करुणा है और बेबसी)

हरखू : सरकार के हाथै में थमाय देय गइया का पगहा…

ज़मींदार : तुम लोग सोचते हो इस नाटक से मैं पसीज जाऊंगा। या तो मेरे चोरी गए सामान का अभी अता-पता बताओ…नहीं तो…

मथुरा : अब तो गाय थान से खुल आई, सरकार। नाता टूटा तो जैसे चार कोस, वैसे दस कोस।…दूरी तो दूरी है…

ज़मींदार : तुम लोगों ने बड़ा नाता निभाया है न। कहां है सालिगराम? ले चलो गाय को हवेली में, और ये लो चुकता की रसीद मथुरा! फिर कभी सुना कि हवेली की कंकरी तक उठ गई तो एक-एक को बंधवा दूंगा, याद रखना।

(धीरे-धीरे शोर बढ़ कर समाप्त होता है। जमीदार के जाने का स्वर और साथ में गाय के खुरों की आवाज़ सुनायी पड़ती रहती है। मथुरा एक लंबी सांस खींचता है।)

मथुरा : टूट गया नाता! आज गऊ से नहीं…पीढ़ियों का टूट गया…

(फेड आउट)

(क्षणिक अंतराल के बाद जमीदार के कस्बे वाले घर का आंगन। घरेलू कामों का शोर हो रहा है और जमीदार साहब अपनी पत्नीसे कह रहे है।)

ज़मींदार : यह गाय खुलवा लाया हूं और मथुरा को चुकता की रसीद दे दी है। दो सौ में कौन बुरी है। चार सेर दूध है इसके पास। तुम रखना चाहो रखो नहीं तो रुपये खड़े कर लू। दो सौ की तो हाथों हाथ जाएगी। डूबा हुआ पैसा निकल आया।

पत्नी : यह आपने अच्छा नहीं किया। इन दो सौ के बग़ैर कुछ बना-बिगड़ा नहीं जाता था। मथुरा हमारा पुराना नौकर रहा है। जैसा अपना महेश, वैसा ही मथुरा। गरीब न होता तो हमारे यहां काहे को पड़ा रहता।

ज़मींदार : अरे सब ठीक है। सीधी उंगलियों पैसा नहीं निकलता। अभी इसके लिए नांद गड़वाता हूं।

पत्नी : नहीं, इसकी नांद इस घर में नहीं गड़ेगी। अभी गांव छोड़े कितने-से दिन हुए हैं ? गांव वाले पराये नहीं हो गए। आज हम वहीं होते तो वे ही हमारे काम आते, और फिर कल का किसने देखा है। शायद हमें काम ही पड़ जाय।

ज़मींदार : इसका मतलब है मैं दब जाऊं, सब लुटवा दूं ?

पत्नी : कुछ भी हो'''यह गाय यहां नहीं रहेगी, यह वापस मथुरा के पास जाएगी। ख़ून के रिश्ते ही नहीं होते, मेल-मुहब्बत के रिश्ते भी होते हैं। डकैती में मथुरा ने जान पर खेल कर हमारा सब कुछ बचाया था'''तुम इतने रूखे कैसे हो गए ?

ज़मींदार : तब की बात और थी। तब उसकी आंखों में सील था। आज वे समझते हैं आज़ाद हो गए हैं। ज़मींदारियां टूट गयी हैं तो ज़मींदारों का जितना माल हड़प पाओ, हड़प जाओ। हवेली के दरवाजे निकाल ले गए, नांदें खोद ले गए और पूछने पर काले चोर की तरह ख़ामोश थे। दिमाग चढ़ गया है सालों का'''

पत्नी : तो जो जी में आये करो।

(क्षणिक अतराल)

(सहसा एक आदमी के दौड़ कर आने की आवाज। वह हांफ रहा है। वह वही गांव का

हरखू है।)

हरखू : बड़े सरकार ! गजब हुई गवा, सरकार !

ज़मींदार : क्या बात है हरखू ! कुछ बताओ भी।

हरखू : सबन मनई रिसियाय के बाग उजाड़े की खातिर उदहीयाय पड़े हैं...

जमीदार : (अतिशय क्रोध से) अच्छा...अरे मैं एक-एक को भून के रख दूंगा। कोई पेड़ों से हाथ लगा के देखे। एक पत्ता भी टूट गया तो खैर नही।

(सहसा महेश का प्रवेश—ज़मीदार साहब का लडका।)

महेश : पिता जी ! इस तरह पत्ता भी नही बच सकता। पेड़ तो पेड़, आदमी तक नही बचेंगे।

हरखू : छोटे सरकार ! अब आपहि समुझावें। मुदा...

ज़मीदार : ये क्या समझायेगा। ये मेरा बुज़र्ग है क्या ?

महेश : आप गुस्से में हैं, पिता जी। आखिर झगड़ा क्या है ? क्या बात है, हरखू ! सुना है लोगो ने वहां हवेली को बड़ा नुकसान पहुचाया है। इसी तरह हम एक-दूसरे को नुकसान पहुचाते रहे तो सब तबाह हो जाएगा। किसी के हाथ कुछ नही आएगा।

हरखू : ऊ मथुरवा तो आंसू बहावत बैठा है, पर कौनहु मानत नहिना।

(भीतर से मा की आवाज़ आती है 'महेश सुनो इधर' और महेश भीतर चला जाता है—'आया मा' कहता हुआ)

ज़मींदार : हरखू गाव के लोगो से बोल देना—एक पत्ता भी टूट गया तो खैर नही...

हरखू : सरकार, आपहि के गुस्सा के कारन...

ज़मीदार : मैं कुछ नही सुनना चाहता...जा के खबरदार कर दे

सबको···नही तो एक-एक को गोली से उड़ा दूंगा !

(फेड आउट)

(क्षणिक अंतराल के बाद, महेश का स्वर उभरता है)

महेश : पिता जी, मुझे तो कल तक पता नही था ! आप मथुरा की गाय खुलवा लाएं हैं।

जमींदार : हां।

महेश : और आपने उस गाय को डेढ़ सौ में ठाकुर के हाथ बेच भी दिया है।

जमींदार : हां।

महेश : और अगर कल मथुरा रुपया लेकर अपनी गाय वापस मांगने आ जाए तो आप क्या करेंगे ?

जमींदार : किस मुंह से मांगेगा ? उसने हवेली का और सामान भी चुराया है। वह भी वसूल करूंगा अब तो।

महेश : पिता जी, कुछ सोचिए तो। वह हमारे यहां वर्षों अपने बाप का कर्ज़ा चुकाने के लिए नौकरी कर चुका है। उसने कर्ज़े से ज्यादा चुकाया है और फिर यह उसकी शराफ़त है कि आज भी हमारे घराने की इज्जत करता है। हमसे प्रेम-मुहब्बत का रिश्ता मानता है! और आप उसकी गाय खुलवा लाए।

जमींदार : तुम मेरे झगड़ों में टांग मत अड़ाया करो !

महेश : जमींदारियां खत्म हो चुकी हैं, पिता जी ! पुराने रिश्ते अब नही चल सकते। मालिक-नौकर के रिश्ते अब नहीं चल पाएगे। यही क्या कम है कि वे अब भी आपकी बात सुन लेते हैं। आज वे हमारे-आपके साथ हैं। हमने नये रिश्तों को जन्म दिया है। आज सब पुरानी बातों को भूल कर एकदम नया सोचना है। हमें एक-दूसरे का आदर करना है, उनकी भावनाओं को समझना

है। सामन्ती ढांचा चरमरा कर टूट चुका है। नये संबंधों को देखने और समझने की कोशिश कीजिए।

जमींदार : तुम अपना यह लेक्चर मेरे सामने मत झाड़ा करो। इन्हें उन बुद्धुओं के लिए सुरक्षित रखो जो तुम्हारी बात सुनते हों।

महेश : (गुस्से से) पिता जी, मथुरा की गाय वापस जायगी।

जमींदार : वह बिक चुकी है।

महेश : वह ठाकुर के थान पर नहीं, मथुरा के थान पर ही बंधेगी।

जमींदार : मैं देख लूगा।

महेश : देख लीजिएगा…

(फेड आउट)

(गाव की चौपाल का माहौल। जानवरों की घंटियां टुन-टुना रही है। कुछ आदमियों का मिला-जुला शोर! कुछ तेज-तेज बातें, और फिर क्षणिक खामोशी, जैसे कोई बड़ी वारदात हो गई है।)

हरखू : अब सब मनई तनि देर का चुप्पी साध लेउ, छोटे सरकार कुछ बुलि हैं!

महेश : मुझे पता चला है कि कल गांव में मारपीट हो गई है। और यह कितनी बड़ी बात है कि जिसके प्रति अन्याय हुआ था, और जिसकी वजह से सारा गांव पिता जी के खिलाफ बिगड़ उठा था उसी मथुरा ने मार खाई है! आप लोग मथुरा की गाय चली जाने से ही तो दुखी हुए थे और सबने उसी की खातिर गांव का फलता-फूलता हुआ बाग उजाड़ देने की ठान ली थी। जिसे स्वयं मथुरा बर्दाश्त नहीं कर पाया और उसने छाती तान कर बाग के बचाव के लिए आपकी

लाठियां सहीं और उसे उजड़ने से बचा लिया…

(तभी कराहता हुआ मथुरा चौपाल में आता है और सब लोग फुसफुसाने लगते हैं—'मथुरा है …मथुरा आया है'…)

महेश : इस आदमी से अपनी तुलना कीजिए ! आप जमींदार का बाग नहीं उजाड़ रहे थे, अपने गांव का एक खूबसूरत बाग उजाड़ रहे थे। वह बाग आपके गांव की शोभा है। अगर हम जमीन और पेड़-पौधों से बैर ठानेंगे तो कहीं के नहीं रह जाएंगे। यह हमारा ईश्वरीय रिश्ता है ! आप समझते हैं कि हमारे घराने से आपका नाता-रिश्ता सिर्फ यही था कि हम लगान वसूल करते थे और आप देते थे—इससे भी ऊपर एक और बड़ा रिश्ता भाईचारे और आपसी सहयोग का था, प्रेम का था।

मथुरा : पर छोटे बाबू ! बड़े सरकार तो खुद सारे नाते तोड़कर गए हैं। हम कभी भी यह नहीं चाहते थे। गांववालों की भी गलती थी कि हवेली का सामान हमारे रहते चोरी चला गया, पर हम क्या कर सकते थे। उसी गुस्से में वो मेरी गाय ले गए। और इन लोगों ने उनके खिलाफ नफ़रत से भरकर बाग को उजाड़ देने की सोची। वह मैं नहीं देख सकता। आदमी से ही नहीं, धरती-परती से भी हमारा रिश्ता है। हमें बड़ा अफसोस है कि बड़े बाबू जी हमें गैर समझने लगे। बस, इसी बात का दुख है, छोटे बाबू !

महेश : उन तक सब खबरें पहुंच चुकी हैं। उन्होंने तुम्हारी गाय बेच भी दी थी। पर जब उन्हें मालूम हुआ कि तुमने बाग की हिफाजत की खातिर इतनी चोट खाई है तो वे अपनी गलती महसूस कर रहे थे। मुझे उन्होंने ही

भेजा है कि मैं जाकर तुम लोगों को देख आऊं !

(तभी महफिल में खुसफुसाहट होने लगती है—'बड़े सरकार आ रहे हैं।' सारे लोग उत्सुक हो जाते हैं। एक क्षण बाद ही पैरों की आवाज़ होती है और साथ ही गाय के गले की घंटी टुनटुनाने लगती है, और उसके खुरों का स्वर। ज़मीदार गाय को पुचकारते हुए लिए आ रहे हैं।)

ज़मींदार : (आते ही) यह लो मथुरा अपनी गाय। इसे वापस ले आया हूं !

मथुरा : मालिक !

ज़मींदार : मालिक न कहो, मथुरा। हम अब आज से एक-से किसान हैं।

(सभी लोगों की हर्ष-ध्वनि सुनाई पड़ती है।)

हरखू : ऐ ! कौनहु दौड़कर एक मोढ़ा लै आउ, भइयन ! बड़े सरकार का ज़मीन पै बैठेंगे···

ज़मींदार : हमारा यही रिश्ता है, हरखू ! इन्ही बागों की फसल और आमदनी से मेरा घर-बार चल रहा है। इसी धरती की महिमा से हम सब जी रहे हैं। हमारा यही नाता है अब !

महेश : और आज हम नये रिश्तों की बुनियाद डाल रहे है। जो ज़मीदार था वह मिट गया। अब सब किसान है, सब एक हैं। अगर हम अब भी अपनी नादानी में नफरत पालते रहे तो हमारा ही नुकसान है। हमारी धरती ही उजड़ती है और हमी भूखो मरते हैं। अगर बाग उजड़ गया होता तो किसका क्या लाभ था ? इसलिए हम इन छोटी-छोटी बातों से बचें जो नफरत को जन्म देकर पीढ़ियों पुराने नाते-रिश्ते एक पल में तोड़ देती हैं। हम

नये रिश्तों को देखें, तभी हमारा कल्याण है, हमारे गांव का कल्याण है।

ज़मींदार : और मैंने यह तय किया है कि अब हम फिर से यहीं आकर बसेंगे। हमारी जड़ें धरती में हैं—हमारा नाता अटूट है!

एक स्वर : बड़े सरकार की नादें और दरवाज़े कल लग जाएंगे। हवेली का सारा सामान वापस आ जायेगा...

(हर्षसूचक संगीत)

(फेड आउट)

अवधि : 20 मिनट

सुक्खू का संसार

नैरेटर : ईसन नदी के किनारे एक गांव है—नाम है, चंदरपुर ! भारत के लाखों गांवों की तरह पिछड़ा हुआ ! वही उलझी हुई, गंदी-अंधेरी गलियां; पोखर तालाबों में सड़ता हुआ पानी ! वही बंटवारे और घरेलू झगड़ों में टुकड़े-टुकड़े हो गए खेत !···चंदरपुर गांव—जहां के लोग गरीबी को अपना भाग्य मान बैठे हैं !

बहुत से गांवों में योजनाओं का प्रकाश फैल चुका है, पर चंदरपुर अभी तक अंधेरा पड़ा है ! शाम होते-होते पोखर-तालाबों पर मच्छर भिनभिनाते और शंकर जी की मठिया पर खड़े पीपल पर उल्लू बोलते !··· पचास-साठ घरों का यह चंदरपुर गांव इसी अंधेरे और पिछड़ेपन की नींद सोता रहता ! बरसात में ईसन नदी अपनी बाढ़ से फसलें चौपट कर देती···तो भी यहां का किसान हाथ-पर हाथ धरे बैठा रहता ! बाढ़ को देवी मइया का प्रकोप मानता···और जब जेठ-बैसाख में सूखा पड़ता—धरती की छाती दरक जाती और गांव के जानवर मरने लगते, तो भी उसे भगवान का प्रकोप ही माना जाता···

लेकिन आदमी तो हर दशा में जीता है···सुक्खू भी कहां जाता! सुक्खू इस चंदरपुर गांव में रहता है! सुक्खू की पहली औरत मर गई···एक बेटा और एक बेटी छोड़ गई—राधे और लछिमी! राधे बाप से अलग होकर शहर में मजदूरी करने चला गया! लछिमी का ब्याह एक पलटनवाले से हो गया!

सुक्खू ने दूसरा ब्याह किया—और अब घर में है—छोटा बेटा बचनू और उसकी मां—मंगला! एक भाई था हरखू—वह झगड़ा करके अलग हो गया··· और अब सुक्खू की जिंदगी चल रही है राम आसरे!

(लकड़ी चीरने की या बर्तन धोने की आवाज आ रही है—तभी बाहर से आते कदमों की आहट)

सुक्खू : अरे बचनू की माई···(आवाज आती रहती है) ओ बचनू की महतारी···

मंगला : *का है! देखते नहीं; बर्तन धो रही हूं!*

सुक्खू : अरे सुन तो···हमरी अंगुरी फट गई है···खून बह रहा है···

मंगला : *तो मैं का करूं! और जाओ गिरामसेवक जी के साथ ···गांव भर की सफाई जमादारी करो···*

सुक्खू : अरे तो इसमें बिगड़ने की का बात है री···घर-द्वार, गली-थान साफ रहेंगे तो सबका फायदा है···*गिराम सेवक* गलत नहीं कहते हैं···सफाई से बीमारी दूर रहेंगी···

मंगला : (बात काटकर) तो कौन हमारे घर में बीमार है···सब तो ठीक हैं···तुम्हें तो बाहर की पड़ी रहती है···घर-बार से तुम्हें का मतलब?

सुक्खू : (बात काटकर) कैसी बात करती है बचनू की माई··· जरा खून तो पोछ।

मंगला : जिसका घर साफ करके आए हो उसी से पुछवाओ जाकर···(लकड़ी काटती रहती है।)

सुक्खू : अरे तेरी ये ताने-तिसने की आदत नही जाती ! जरा गांव की सफाई में सब लोगों का हाथ बंटाने चला गया तो तेरे ऊपर बज्जर टूट गया !

मंगला : कितने लोग गये थे हाथ बंटाने सफाई में ! (गुस्से और व्यंग्य से) बस तुम्हारे ऊपर परमारथ का भूत सवार है···और सबके हाथ-गोड़ टूटे हैं जो अपने घर की सफाई नहीं कर सकते !

सुक्खू : सब अपने-अपने घर की सफाई करते हैं···कौन नही करता, पर गली रास्ते तो सबके हैं···सब आए थे सफाई करने।

मंगला : मेरे तो पिरान लेने के लिए एक न एक जंजाल इस जनम में लगा ही रहेगा···अभी तक तुम्हारा वह भइया था हरखुआ···अब ये गिराम सेवक आ गये हैं···बड़ा भला करने आये है हमारा ये गिरामसेवक···हां···

सुक्खू : गिरामसेवक हमारे गांव की भलाई की बातें बताते हैं।

मंगला : (बात काटकर) और वो रामसेवक का बताता था ? (व्यंग्य से) कैसी मीठी-मीठी बातें करता था रामसेवक ···रुपिया खाके भाग गया तब से पता चला है ? रामसेवक और गिरामसेवक सब एक थैली के चट्टे-बट्टे है···तुम परतीत करो, हमारा विसवास नही किसी सेवक-एवक पर··

सुक्खू : (हंसकर) अरे पगली रामसेवक और गिरामसेवक कोई भाई-भाई थोड़े ही है···

मंगला : हमे चलाया मत करो···घर लुटवाना है तो लुटवाओ।

सुक्खू : अच्छा-अच्छा, जरा कपड़े की चीट दे, अंगुली पर लपेट लूं···भनभना रही है कबसे···

मंगला : अभी का हुआ है···अभी तो माथा भनभनायेगा···

तुम्हारा वह लाड़ला भइया आया था हरखुआ...

सुक्खू : (डपटकर) संभाल कर नाम लिया कर। आखिर तेरा देवर है...

मंगला : भाई होगा तुम्हारा, हमारा देवर-फेवर कुछ नहीं है समझे ! जो घर का तिनका-तिनका बांट करवा के ले गया वो दुसमन है मेरे घर का।

सुक्खू : इस घर में रहता हरखू तब भी तो खाता-पीता... सो तुझे पसंद नहीं आया !

मंगला : (हाथ की छोटी कुल्हाड़ी पटकने की आवाज) अभी आके हरखुआ जब खेत पर हल रुकवायेगा तो पता चलेगा तुम्हें...तब देखूगी कितना सबर है तुम्हारे करेजे में—जित्ता हमने उसे बरदास किया है, उत्ता जिस दिन कर लोगे, तब देख लूंगी...

सुक्खू : हल रुकवाने आएगा हरखू !

मंगला : मैं तो मुंह बंद किए हूं, सोचा था कुछ नहीं कहूंगी... जबरदस्ती कौन ओढ़े सारा दोस अपने कपार पर...

सुक्खू : (क्रोध से) अरे कौन-सा दोस मढ़ गया तेरे कपार पर...

मंगला : वो सब पता है...हरखुआ की कोई बात हुई नहीं कि बस सब दोस मेरा...अभी आया था तनफनाता हुआ... काले नाग की तरह ! हां !

सुक्खू : कौन ! हरखू आया था ?

मंगला : हां ! हरखुआ। सैकड़ों गारी देकर गया है...हिस्सा मांगने आया था।

सुक्खू : हिस्सा मांगने !

मंगला : अब अचरज काहे को हो रहा है ! कहता था मेरी चीज-बस्त अलग करो...गिरस्थी का हिस्सा-बांट करो... समझे ! और तुम कान खोल के सुन लो फिर दोस मत देना हां...हमने साफ-साफ कह दिया उससे कि सारा हिस्सा-बांट पंचों के सामने हो चुका है...खेत खलिहान,

गोरू जनावर और चीज-बस्त सबका ! यहां तेरी रुसभा भर चीज बाकी नही है···इस घर मे अब कुछ नही है तेरा···तिनका तलक नही···हां···

सुक्खू : (बात काटकर) ठीक है, बाट तो तिनके-तिनके का हो गया था···पंच फैसला हो चुका है···इसमे तूने कुछ गलत नही कहा···

मंगला : (मुंह चिढ़ाने के अंदाज़ में) गलत कुछ नही कहा। तुम तो सब गलत कर देते हो बाद मे। अरे वो चीज़-बस्त ही नही, जमीन मांगने आया था।

सुक्खू : (आश्चर्य से) जमीन।

मंगला : हां-हां जमीन ! कोई तालाब खुदवा रहे हैं तुम्हारे गिरामसेवक जी···हरखुआ के खेत तालाब के लिए नाप लिए हैं उन्होंने···(इस सन्तोष के साथ कि हरखू के खेत चले गए) भगवान सब यहीं दिखाय देता है··· हमारी छाती पे चढ़के खेत बंटवाये थे न···इसी का फल मिला है हरखुआ को···

सुक्खू : तो तालाब में हरखू की जमीन नप गयी।

(तभी बचनू आता है, उसके कदमों की आहट)

बचनू : दादा···दादा···चच्चा आया था···हमसे पूछता था, भइया हैं भीतर···

सुक्खू : कौन हरखू आया रहा ?

बचनू : हां दादा···चच्चा लम्बा लट्ठ लिए था !

मंगला : फौजदारी करेगा···इसका नास जाय बदमास का !

सुक्खू : (चिन्ता से) तू चुप रह···काहे बचनू···किधर चला गया हरखू ?

बचनू : उधर सिरीचन महराज की तरफ···

मंगला : उसके मन में खोट है समझे ! जमीन तालाब में नप

गई तो अब दुबारा बंटवारा करना चाहता है, पंचों को मिलाने गया होगा'''और कहां जायेगा !

सुक्खू : (बाहर जाने को होता है) मैं अभी देखता हूं।

मंगला : तुम किरिया से अपना काम करो'''हमें का गरज पड़ी है वो जो करता है करने दो। आखिर फैसला पंचों ने ही किया था।

सुक्खू : ओ बचनू'''तू भी जरा लपक कर देख—कहां-कहां किस-किस के पास जाता है हरखुआ'''जा'''

मंगला : देख लिए अपने भइया के गुन !

सुक्खू : (गर्व से) अरे सब देख लूंगा। आए जिसे आना हो''' दुबारा बंटवारा कराएगा'''हुं'''

मंगला : (सन्तुष्ट होकर) तुम मेरे ऊपर भौं टेढ़ी करते हो''' (प्रसन्नता से) लाओ पट्टी बांध दूं, कब से खून टपक रहा है'''

सुक्खू : (बहुत गहरी सांस लेकर) ले बांध।

(अन्तराल संगीत)

(खेत में हल चलने का आभास, बैलों की घंटियों और टिक्-टिक् की आवाज़)

बचनू : (दौड़ता हुआ आकर हांफते हुए) दादा-दादा'''चच्चा लट्ठ लिए इधर ही आ रहा है'''

(हल चलने की वही आवाज़ आती रहती है।)

हरखू : (एकदम आकर लाठी पटकने की आवाज़) हल नहीं चलेगा अब यहां।

सुक्खू : (शांत भाव से) का हुआ हरखू। बड़े गरम हो।

(बैलों की आवाज़ थमती है)

हरखू : गरम-नरम कुछ नहीं। तुम्हारी सारी चाल अब खुल गयी है सुक्खू भइया। बड़े भइया हो तो हमारी गर्दन

पर छुरी चलाओगे। देख लूंगा...समझे।

सुक्खू : (नरमी से) अरे कुछ बात भी बतायेगा कि...

हरखू : (गुस्से से) ऐसे बन रहे हो! गिरामसेवक को फांस के मेरी जमीन तालाब मे नपवा दी। पंचों से मिलके उन्हें मेरे खिलाफ कर दिया...और नादान बन रहे हो...

सुक्खू : अरे हरखू। तालाब तो गांव भर के लिए बन रहा है भइया। ईसन की बाढ़ रोकने के लिए...

हरखू : तो मेरी ही जमीन जाएगी उसमे। ये नहीं होगा सुक्खू भइया समझे। खुदेगा तो दोनो की आधी-आधी जमीन में तलाब खुदेगा...

सुक्खू : पर तालाब वहीं बन सकता है जहां तेरे हिस्से की जमीन पड़ती है...फिर भला कैसे...

हरखू : (बात काट कर) बातें मत बनाओ सुक्खू भइया! गिरामसेवक के साथ उठना-बैठना करके तुमने बदमासी की है, जानबूझ के जंजीर उधर गिरवाई है। मैं आधी जमीन तुमसे लेके रहूंगा...समझे। सब विघस कर दूंगा...पंच भी न्याय की बात नहीं कहते, पर इस लाठी मे बहुत बल है। इसी से न्याय होगा। (लाठी पटकता है।)

सुक्खू : तुम्हें गांव पंचायत उसका हरजाना देगी हरखू...

हरखू : देगी तब देगी, एकबार देगी कि हर साल देगी...ये सब बदमासी है तुम लोगों की, हमें निबल समझते हो न इसीलिए...पंच भी बदल गए तेरे रंग में आकर।

सुक्खू : तू इसी के लिए पंचों के पास गया था...अभी हैं?

हरखू : हां, हां, उनका न्याय भी देखना था। देख लिया आज ...(जैसे स्वयं से) हुं कहते हैं बंटवारा हो चुका है... अब मेरा कोई हिस्सा नहीं...न्याय नही करें बदमास।

सुक्खू : (तनिक क्रोध से) सोच समझ कर बोला कर पंच मे परमात्मा रहता है···ऐसी बात मुंह से निकालता है।

हरखू : रहता होगा परमात्मा तेरे लिए···मेरे लिए तो तू बेईमान···पच बेईमान और···

सुक्खू : इत्ती-सी बात पर पंचों के पास दौड़ा गया···अरे सीधा मेरे पास आता···ये तो घर की बात है हरखू···पंचों को बड़े काम करने दे। काहे का लड़ाई-झगड़ा। बाढ़ का पानी जमा करने के लिए तालाब बन रहा है तो सबका फायदा होगा। जमीन चाहिए तुझे। बस, इसी-लिए लाल-ताता हो रहा है न। ले पकड़ हल कीमूठ···जोत खेत···तेरे ऊपर तो लड़ाई सवार रहती है···

हरखू : भोजी से पूछ लिया है पहले। सबेरे गला फाड़-फाड़कर लड़ी थी, कहती थी तिनका नहीं मिलेगा···

सुक्खू : अरे अपने खेत हैं···अपना भाई है तू! गुस्साय के अपनी भौजी से लड़ बैठा···तो का हुआ! खून नाही बदलता है हरखू! पकड़ ये हल की मूंठ···तेरी भौजी भी लड़ेगी, तो देख लूंगा उसे भी!···पंचो के पास भी मत भागना, समझा! पच तो वही करेंगे जिससे पूरे गांव का भला हो···ले जोत अपना खेत!

(बैलो की घंटियो की आवाज थमी हुई है।)

हरखू : सुक्खू भइया···

सुक्खू : अरे मुंह का ताकता है! ले संभाल ये हल-बैल···अब का उमर भर हमसे काम ही कराता रहेगा, पागल कहीं का···लट्ठ ले के आया है लडने···ले पकड़···

(हल की चरमराहट और एक पल बाद बैलो की बजती और दूर जाती घंटियों की आवाज··· इसी में सगीत घुलमिल जाता है और तेज होकर धीरे-धीरे डूब जाता है।)

(फेड आउट)

अवधि : 15 मिनट

सुक्खू का संसार—2

नैरेटर : सुक्खू ने अपने छोटे लड़ाकू भाई हरखू को हल की मूंठ तो पकड़ा दी, पर घर में महाभारत मच गया। सुक्खू की घरवाली मंगला भला इसे काहे को बर्दाश्त करे। आखिर बंटवारा हो चुका है, अब घर-जमीन मे काहे का हिस्सा मांगता है! और सुक्खू ऐसा कि सब कुछ जानते-बूझते हरखू को खेत सौंप आया। ऐसी दया किस काम की जिससे अपना घर उजड़ जाए!

और एक मुसीबत हो। मंगला की जान के लिए सौ मुसीबतें लगी हैं···एक तो परमात्मा की आंख टेढ़ी, दूसरे सुक्खू की यह नादानी!

जवान बिटिया लछिमी का तो करम फूट गया। कल उसका आदमी आके छोड़ गया घर पर। यहां रह के लछिमी की जिन्दगी कैसे पार लगेगी···पहाड़ ऐसी जिन्दगी···

मंगला : (धीमी और दुख से भरी भारी आवाज में) सब्ब लुटा दो ···तुम्हारे यही लच्छन रहे तो आखिरी लुटिया-थारी तक लुट जाएगी···जाने किस नासपीटे पंडित ने बिधी मिलाई थी हमारी-तुम्हारी···उमर बीत गई रोते-झींकते पर तुमने अपना चलन नही छोड़ा। और इस लछिमी का का होगा?

सुक्खू : (समझाते हुए) सब ठीक हो जाएगा बचनू की महतारी। तू जान मत खाया कर। औरत की अकल पे आदमी चले तो गोबर खाने लगे···

मंगला : अब खाना दही-मट्ठा! खेत तो हरखुआ को सौंप आए···जब फसल पर दाना नहीं आएगा तब गोबर ही खाओगे गोबर। औ अपने लच्छनों से खाओगे···

सुक्खू : हरखू की बात छोड़ बचनू की माई। अब लछिमी की सोच। हाय परमात्मा का लिक्खा है इस नादान के भाग में···(मंगला को फुसलाते हुए) कुछ बता रही थी लछिमी ? आखिर हुआ का ?

मंगला : गंगा-जमुना बहा रही है लछिमी। बड़ा नेक लड़का देख के आए थे न तुम। देख ली नेकी। हमने पहले ही कहा था···इन फौजवालों का कोई भरोसा है। इन्हें तो रोज नई मिहरिया चाहिए।

सुक्खू : तो लछिमी कुछ नहीं कहती ? मारा-पीटा तो नहीं उसके आदमी ने···जरा उसका बदन तो देख ले··· (दूसरी तरफ मुंह करके) बचनू···बचनू···(आवाज लगाता है)

बचनू : का दादा ?

सुक्खू : जरा लछिमी को बुला। वहां कुठरिया में बैठी काहें को परान दे रही है···

मंगला : रुक बच्चू। कोई जरूरत नहीं है उसे बुलाने की। वो नहीं आएगी···

(बाहर से सिरीचन महराज आवाज लगाते है।)

सिरीचन : सुक्खू···ओ सुक्खू महतो।

सुक्खू : (भीतर से ही) कौन! सिरीचन महराज। आ जाओ पंडित···चले आओ···

सिरीचन : (भीतर आके) एक बात सुनो सुक्खू।

सुक्खू : पालांगे पंडित। बताओ…
सिरीचन : जरा बाहर आओ, बड़ी वैसी बात है…
मंगला : पंडित पालांगी…
सिरीचन : राम राम भौजी…(एकदम स्थिति के अनुसार) ई कैसी गाज गिरी भौजी।
मंगला : गाज नहीं बज्जर पंडित बज्जर…! बियाही ठियाई बिटिया का घर छूट जाए इससे बड़ी बात और का होगी ?
सुक्खू : सिरीचन महराज, मलाल इस बात का है कि कोई बात नही पता लगी…हम घर पर थे नही। जोरावरसिंह आए और छोड़ गए…आखिर घर के जमाई थे, पानी तक नहीं पिया ''खड़े खड़े चले गए…
मंगला : फौज के रौब में था। लपटनी जूता खुट्ट-खुट्ट करता आया और लछिमी को भीतर करके चला गया। बक्सा ओसारे में पटक गया…
सिरीचन : गहना-जेवर साथ भेजा है या रख लिया ?
सुक्खू : उसकी परवाह नहीं पंडित। पर लड़की का कसूर तो मालूम हो।
सिरीचन : गांव में काना-फूसी चल रही है महतो ! जो जिसकी जबान पर आता है बकता है। आखिर गांव की इज्जत का सवाल है।
सुक्खू : गांव की इज्जत ऐसे नही बिगड़ जाती पंडित। लछिमी में दस ऐब हों, पर ऐसी वैसी बात नही हो सकती…
सिरीचन : (बात संभाल कर) तुम तो गलत समझ गए महतो। अब आज गांव वालों की ये मजाल कि चन्दरपुर की लड़की छोड़ जाए ! हैं ! और फिर बित्ता भर का वो गांव देवामई ! जोरावरसिंह की यह हिम्मत कि हमारी लड़की छोड़ के साफ निकल जाए गाव से।
सुक्खू : मैं कल जाऊंगा जोरावरसिंह के गांव देवामई। कम से

कम बात तो पता लगे···

सिरीचन : बात और कुछ नहीं है महतो। जोरावरसिंह फौज-लस्कर का आदमी है, वहां बड़े-बड़े लपटनों की औरतें देखता है···तेल-फुलेल और पत्तीदार बालवाली··· मेमों को देख-देख के उसका भेजा चल गया है। कहां हमारी सीधी-सादी लछिमी···उसके बस का नहीं ये साज-सिंगार···

मंगला : तुम कैसे कह रहे हो सिरीचन पंडित···अन्तर्जामी की तरह बोल रहे हो।

सिरीचन : अन्तर्जामी ही समझो भौजी। जोरावरसिंह कंधे से बन्दूक लटकाए धर्मशाले में टिके थे। हमें जैसे ही पता चला पहुंचे। बहुत समझा-बुझा के पूछा तो कहने लगे···ऐसी फूहड़ इस्तरी हमारे किस काम की। हम लाम का जवान लोग हैं···बढ़िया खाता पीता और बढ़िया औरत रखता है···

मंगला : (चीखकर) आग लगे आदमी की जात में···बढ़िया औरत रखता है। हमें घरमसाला तक पहुंचा दो, तो देखूं उसकी मूंछ मे कित्ते बाल हैं।

सिरीचन : अब घर मे बहस करने से का फायदा। पंचायत में मामला पेस करो। जोरावरसिंह को लाया जाए···बस पानी-पानी हो जाएगा।

(बंसी मुखिया पुकार लगाते हैं।)

मुखिया : महतो···अरे ओ सुक्खू महतो···

सुक्खू : आ जाओ मुखिया जी···

मुखिया : (भीतर आकर) गजब खबर सुनी है, भाई। आज तक ऐसा नहीं हुआ? ई शहर का परभाव अब गांव तक पहुच रहा है। भला ऐसा कहीं सुना था? हिम्मत देखो देवामई वालों की, उस जोरावर सिंह की···

सिरीचन : लछिमी जवान मिट्टी है मुखिया। कोई रास्ता बताओ…

मुखिया : अब का बताएं पंडित भैया…

मंगला : करम खराब हैं लछिमी के…

मुखिया : जरा बुलाओ लछिमी को…

मंगला : देखो, आजाए तो है (जाती है) देखती हूं…

(एक क्षण बाद ही लछिमी की सिसकियां सुनाई पड़ती है और सन्नाटा छा जाता है…।)

सिरीचन : कैसे आए बिचारी…कुछ हया-सरम भी होती है। आखिर चदरपुर की लड़की है।

(सिसकियां आती रहती हैं)

मुखिया : जोरावरसिंह के घरवालों को बुलवाया जाए और मामला पंचायत में पेस हो, तब बात बने…

(सिसकियां और भी गहरी हो जाती है)

सुक्खू : (बहुत दर्द से) का अब लछिमी पंचायत में जाएगी मुखिया! इससे अच्छा है, संखिया खाकर लेट रहे… (बहुत निराश स्वर में)

मुखिया : (डाट कर) कैसी बातें करते हो सुक्खू। इतने समझदार हो फिर भी…

सिरीचन : (चुटकी बजाकर) एक बात समझ में आती है।

(मगला आती है)

मंगला : तुम अपनी बात रहने दो पंडित। ऐसे विधर्मी के घर अब हमारी बेटी नहीं जाएगी…

सुक्खू : (उत्सुकता से) कुछ कहा लछमिनिया ने?

मंगला : (उदास स्वर में) ऐसा कहीं सुना था मुखिया? मेरे तो

मुंह से नहीं निकलता···

सुक्खू : (बेहद उत्सुक होकर) बताओ न।

(लछिमी की सिसकियां फिर उभरती हैं।)

मंगला : का बताऊं ? लछिमी का आदमी कहता है···मुंह में लाली लगाओ···पत्तीदार बाल काढ़ो···हमारे साथ नाच करो।

सुक्खू : का ? नाच !

मंगला : दुर्गत कर दी है बिचारी की। वह तो नौटंकी की नटनी चाहता है···बदमास कहीं का।

सिरीचन : एक हिकमत से काम भी निकल सकता है और ईंट का जवाब पत्थर से दिया जा सकता है।

मंगला : हां हां बताओ पंडित।

सिरीचन : देवामई गांव की जितनी लड़कियां अपने गांव में हैं। सब को छोड़ दिया जाए···हांक दो गोरुओं की की तरह। तब आंखें खुलेंगी उस जोरावरसिंह के गांववालों की। खुद दौड़ेंगे पंचायत करने।

सुक्खू : कैसी बात करते हो पंडित।

मंगला : (प्रसन्न होकर) कैसी बात का। एकदम ठीक जुगत बताई है पंडित ने जस को तस। ईंट का जवाब पत्थर।

मुखिया : इससे झगड़ा बढ़ेगा। हमारी बात मानो तो हम पंच लोग खुद देवामई जाके बात रफा-दफा कर आएं। जोरावरसिंह पर जुर्माना भी ठोंक दें।

सिरीचन : (बड़े भेद से समझाते हुए) और जोरावरसिंह ने हमारी लछिमी पर दस झूठी और ऊलजलूल बातें ठोंक दीं तब कित्ती इज्जत रह जाएगी। औरत की जात···कैसे सहेगी···। हम जो कहते हैं वह करो।

मंगला : हरखुआ की औरत जोरावरसिंह के गांव देवामई की है। सबसे पहले उसे ही वापस भेजा जाए।

सुक्खू : (डांटकर) चुप रह मंगला। सरम नहीं आती, अपनी देवरानी के लिए ये बात कहते···

मंगला : हरखू का नाम सुनते खून जोर मारने लगता है तुम्हारा··· बड़ा सगा बनता है तो बखत पे काम आये। पकड़ा तो आए थे हल की मूंठ। अब हमारी लड़की के बिगड़े में काम आए तो जानूं।

सुक्खू : काम आने की बात कहती है तो लछिमी के लिए हरखू किसी की गर्दन तक टीप सकता है लेकिन···

मंगला : बहुत देखे हैं गर्दन टीपने वाले। जमीन दे आए हो तो उसकी तरफदारी करोगे ही···

सिरीचन : ओ बचनू। (मंगला से) तू चुप रह मंगला। बचनुआ।

बचनू : हां, पंडित काका।

सिरीचन : जरा हरखू को बुला ला।

बचनू : हरखू चाचा तो लट्ठ बांधे के धरमसाला की तरफ गए हैं···

सुक्खू : ई हरखुआ जेहल का मुह दिखवाएगा। जब देखो तब लट्ठ बांधकर निकल पड़ता है। (परेशानी से) जमाई से लड़ने गया होगा···बड़ाअनरथ हो गया मुखिया···

सिरीचन : (घबरा कर) जमाई बन्दूक लिए बैठा है···कहीं कुछ हो गया तो।

सुक्खू : अरे पंडित, कुछ न कुछ होके रहेगा···जल्दी चलो··· (हड़बड़ा कर भागता हैं बाहर) मेरे साथ आओ···

(तभी हरखू आता है साँस फूल रही है)

हरखू : (सुक्खू को रोक कर) कहां जा रहे हो दादा।

सुक्खू : (वैसी ही परेशानी मे) कहां गया था तू···ई लट्ठ फेंक···

सिरीचन : हरखू। लट्ठ से निपटारा होगा का?

मुखिया : कानून अपने हाथ में लेता है हरखू। (सुक्खू से) जरा मेरे साथ आ सुक्खू।

सुक्खू : चलो मुखिया।···हरखू तू घर में बैठ। (चला जाता है) मैं आता हूं···

हरखू : (बेहद क्रोध से) ई कोई हंसी-दिल्लगी है पंडित! लछिमी को छोड़ के ऐसे नहीं निकलने पाएंगे जमाई बाबू इस गांव से। देवामई की एक-एक लड़की फिकवा दूंगा चन्दरपुर से। हमारी कोई इज्जत नही है?

सिरीचन : (आग पर घी डालते हुए) तो सबसे पहले निकाल अपनी घरवाली को।

मंगला : (आहुति देती हुई) और का। पंडित ठीक कहते हैं!

हरखू : का समझा है तुम लोगो ने मुझे। घरवाली गांव की इज्जत के सामने प्यारी नही है हमें पंडित···जानते हो बेटी घर-गांव की इज्जत होती है इज्जत! एक पल में लो···अभी···न फिकवा दूं अपनी घरवाली को देवामई से, तो असील से पैदा नहीं।

(लाठी पटक कर चलता है। एक पल का सन्नाटा)

मंगला : (सकते में आकर) ई का हो रहा है पंडित···नही··· नही···पंडित। ई नहीं होगा। औरत औरत की मरजाद बराबर है···हाय हरखुआ दुर्गत कर डालेगा देवरानी को···पंडित, उसका खून बहुत गरम है। पंडित उसे रोको···रोको पंडित···हाय ई का हो रहा है···(फूट-फूट कर रो पड़ती है) रोक लो पंडित···

सिरीचन : (असमंस में) जैसा कहो भौजी।···(चला जाता है आवाज लगाता) हरखू सुन तो···

मंगला : अरे बच्चू···(रोते हुए) अपने दादा को बुला ला बेटा।···

बचनू : दादा आ रहे हैं अम्मा।

सुक्खू : (आते हुए) हरखू कहां गया? अरे बोला था···उसे बन्द करके रखो···उसके सर पै भूत सवार है।

(पीछे से पंडित सिरीचन हरखू को मनाते हुए लाते हैं)

सिरीचन : अरे बात तो सुन…सुन तो…

सुक्खू : हरखू ! (डांटकर) इधर बैठ हरखू ! घर से बाहर तेरा पैर नहीं जाएगा। गया कहां था ?

सिरीचन : अपनी घरवाली को निकालने जाय रहा था…देख रहे हो मुखिया जी।

मुखिया : तेरी अकल नसा गई है हरखू।

हरखू : (बिफर कर) जब पंच परमेसर कुछ नहीं कर सकते तो हरखू चुप्प नहीं बैठेगा। समझे मुखिया !

मंगला : (रोते हुए) तू पारवती पर इत्ता जुलुम मत कर हरखू। मेरी देवरानी पारवती अब इस घर की मरजाद है… हां…उसे कोई नहीं निकाल सकता।

सुक्खू : पारवती को निकालने गया था ! ई कौन-सा तरीका हुआ हरखू ! जोरावरसिंह ने अपने घर की मरजाद नहीं रखी, तो का हम अपनी मरजाद भी खो दें !… इसके लच्छन देखते हो मुखिया ?

मुखिया : सुनो सुक्खू…हम लोग लछिमी बिटिया को लेके देवामई गांव चलते हैं…

(तभी लछिमी की सिसकियां और चूड़ियों की आवाज़ आती है)

लछिमी : (रोते हुए) दादा ! मैं ससुराल वापस नहीं जाऊंगी !

मंगला : धीरज धर लछिमी…मोर बिटिया…

मुखिया : पर ये पहाड़ जैसी ज़िन्दगी पीहर में कैसे कटेगी बिटिया…

लछिमी : मुखिया काका ! तुमको नहीं मालूम…का-का दुर्गत हुई है मेरी…दादा रे…मैं पलटन की मेम नहीं बन सकती… (रोती है)

सुक्खू : रो मत लछिमी…रो मत

हरखू : अरे तुहार चाचा हरखू अभी जिंदा है बेटा ! हमार भतीजी नौटंकी का नटनी नहीं बनेगी !

मुखिया : तू चुप रह हरखू…मैं पंचायत बुला के सब ठीक कर दूंगा !

हरखू : मुखिया ! पंचायत इसमें का करेगी ! आदमी-औरत का फटा दिल नही जोड़ पायेगी पंचायत !

मुखिया : अरे तू देख तो हरखू !

लछिमी : नाही…मैं जान दे दूंगी पर लौट के बैरक या देवामई नही जाऊंगी…नही जाऊंगी…

मंगला : तू हमारे पास रहेगी लछिमी…हमारे पास…

सुक्खू : सुन लछिमी ! ऐसा कुलच्छमी है तेरा आदमी, तो मैं तुझे कभी वापस नहीं भेजूंगा बेटा…तू यहीं रह, पढ़-लिख के अपनी जिंदगी बना…वो तो तेरे पैर छूने आयेगा…

हरखू : और का ! दुनिया बहुत बदल गई है लछिमी ! अरे अपना बड़का भतीजा राधे सहर में रहता है…भइया …राधे की घरवाली तो पढ़ी-लिखी है…राधे से पूछो का किया जाये…तू घबरा मत लछिमी ।

सुक्खू : हां बेटा ! घबरा मत…इन बांहों में बहुत ताकत है ! औ' सब दिन अंधेरा थोड़े ही रहेगा…सब दिन अंधेरा नाहीं र…है…गा…

(संगीत तेज़ी से उभरता है)

(फेड आउट)

अवधि : 15 मिनट ।

सुक्खू का संसार—3

नैरेटर : सुक्खू की किस्मत में चैन नहीं। घर और गाव के झगड़े और ऊपर से अब जवान ब्याही बेटी का पालन पोषण। मुसीबतों के दिन जैसे चारों ओर से घिरे आ रहे हैं। ऐसे में अपने जवान बेटो की ही याद आती है न! सुक्खू ने खत लिखवाया था, अपने मजदूर बेटे राधे को। चार आदमी अपने होते हैं तो अन्धेरे में भी रास्ता निकल आता है। बाप बुलाता तो राधे कैसे न आता। न जाने लछिमी पर कौन-सा पहाड़ टूट पड़ा होगा। चिट्ठी पाते ही राधे छुट्टी लेकर सीधे गांव पहुंचा।

सुक्खू : अरे राधे बेटा, तुम आ गए तो जैसे मेरा बोझ हल्का हो गया। तेरी राह देख रहा था। अरी मंगला, हरखू को बुला जरा…

मंगला : (दूर से आते हुए) अरे मिल लेगा हरखुआ से भी, जल्दी का है। अभी तो पानी पिया है, दो पल बैठने दो। तुम्हें तो अपने भाई की ही पड़ी रहती है।

राधे : बात क्या हुई दादा! कब आई लछिमी?

सुक्खू : ठीक से कोई बात ही पता नहीं चली…पन्द्रह दिन हुए जमाई आए और लछिमी को छोड़ कर चले गए। मुझ से तो भेंट भी नहीं हुई।

राधे : लछिमी ने कुछ नहीं बताया ?

मंगला : अरे उन बातों को का करोगी जान के। सौ बात की एक बात कि न वह लछिमी को रखना चाहते हैं और न लछिमी उनके साथ रहना ही चाहती है !

सुक्खू : हमने भी छाती पोढ़ी कर ली है बेटा ! जब लछिमी का मन नही है, तो नही भेजूंगा।

मंगला : छाती पोढ़ी करने से उसकी जिन्दगी थोड़ी कट जाएगी ···लड़की तो पराया धन है, कब तक जोहेगी तुम लोगो का मुंह···क्यों राधे !

राधे : अरे मुंह जोहने की क्या बात है ?

मंगला : पचास बातें ऐसी होती हैं, जो औरत बाप-माइयो से नही कह सकती। तुम क्या जानो !

सुक्खू : मगला ! हर बखत बेकार की बातें मत किया कर··· अपनी टांग अड़ाए रहती है। अब राधे आ गया है, हमें फिकर करने की जरूरत नही है। ई सब ठीक कर लिगा।

राधे : ऐसी कौन-सी बड़ी बात है, रहने को लछिमी मेरे पास सहर मे रह लेगी।

मंगला : अरे सिरफ पेट भरने की बात तो नही है न !

राधे : मैं दूसरी शादी करवा दूंगा।

मंगला : (चीखकर) ई सहर की बात तू अपने सहर में रख राधे !···कही ऐसा अधर्म भी सुना है। जबान गिर जाए तेरी।

राधे : (हसकर) इसमें अधर्म की कौन-सी बात है छोटी अम्मा ! आदमी चार ब्याह कर सकता है तो औरत नही कर सकती क्या ? जब ऐसी बात हो ही गई है तो कल ही सुन लेना कि जमाई ने दूसरा ब्याह कर लिया।

सुक्खू : वो तो होगा ही···

मंगला : जमाई कुएं में गिरे तो हम अपनी मरजाद खो दें का !

सुक्खू : (राधे से) बेटा तू इसकी बातें पे कान न दें। कोई ऐसा जतन कर कि लछिमी की जिन्दगी सुधर जाए। ऐही सब सोचने के लिए तो तुझे बुलाया है बेटा ! हम गवई गांव के आदमी ज्यादा जानते भी नहीं। तूने सहर··· देखा है कोई रास्ता निकाल तू ही।

राधे : रास्ते का क्या है दादा ! लछिमी को पढा-लिखा देंगे। पढ़-लिख लेने के बाद पचास रास्ते अपने आप निकल जाते हैं।

मंगला : (तिनककर) निकालो रास्ता···निकालो। ई कोई मोटर गाड़ी नहीं है जो जिदर से चाही निकाल ली।

(बाहर से आवाज़ आती है)

साधूजी : (बाहर से) सुक्खू महतो। सुना राधेलाल आए हैं सहर से···ओ सुक्खू महतो।

सुक्खू : (धीरे से) लगता है साधुजी आ गए हैं।

मंगला : साधू होंगे तुम्हारे लिए, मुसटंडा ऐसा घूमता है गांव भर में ! चरस-गाजे के लिए, पैसा लेने आया होगा।

साधूजी : (और ज़ोर से चीखकर) बम्ब भोले। जय शिव शंकर ···अरे ओ सुक्खू महतो···

राधे : बुला लो दादा भीतर !

सुक्खू : आ जाओ भीतर ही साधूजी···यहीं आ जाओ···

(साधूजी भीतर आते हैं)

साधूजी : (राधे से) अरे राधेलाल ! तुम्हारी तो हुलिया बदल गई।

राधे : सब आपकी दया है साधूजी···

साधूजी : अरे मेहतो एक नई खबर सुनी···चौपाल में सहर से एक बाई जी आई है। कहती हैं सरकार ने उन्हें गांव में सेवा करने को भेजा है। अरे पूछो भला, हम कम थे

सेवा करने को।

सुक्खू : अरे न जाने किती आती रहती हैं, आई होगी कोई···

साधूजी : बड़ी चटक पटक हैं! कहती है गांव की इस्तिरियों को बाहर निकालो। उन्हें बेकार बखत में काम सिखायेंगी ···अरे पूछो भला···पत्तीदार बाल काढ़े हैं, आदमी की तरह धोती का फेंटा कसे हैं, पटर-पटर बोलती हैं, बाईजी···औ आंख तो ऐसी चलाती है कि···

मंगला : (हंसकर) तुमने सबसे पहले का उसकी आंख देखी साधूजी!

साधूजी : अरे पूछो भला, का सिखाएगी ऐसी इस्तिरी! अपना रंग-ढग सिखा देगी!

राधे : ग्राम सेविका होगी साधूजी! कहां है वो।

साधूजी : कहा तो, चौपाल में बैठी हैं, अरे पूछो भला!···मरदों में बैठने की कौन-सी ज़रूरत थी?

सुक्खू : (मंगला से) तू अपने घर बुला ला मंगला उन्हें···

मंगला : ई सब हमसे नहीं होगा। हमारा घर का सराय है, जो आए उसे खिलाओ-पिलाओ। ई सबके लिए हमीं बचे हैं गांव मे का!

सुक्खू : तेरी तो बिगड़ने की आदत है पहले, फिर चाहे वो ही काम करे! अरे सहर से आई हैं, मेहमान हैं अपने गांव की, हमी ने सेवा-सत्कार कर दिया तो का हुवा।

राधे : दादा, मैं अभी आया। शायद कुछ काम बन जाए···

मंगला : अरे तू कहां चल दिया राधे, तेरा उससे क्या काम··· आई होंगी चन्दा-फन्दा जमा करने या वोट मांगने।

राधे : अरे जरा देख आऊं, अभी आया···

साधूजी : जाने दो जरा, सहर की इस्तिरी हैं, ई भी तो सहर का बाबू हो गया एही निबटेगा उनसे···हम भी चलें जरा, मज़ा देखें।

राधे : तुम यहीं बैठो साधूजी, तुम लोगों को तो हर बात ही

ऐसी दिखाई पड़ती है। हमेसा अण्ड-बण्ड सूझती है। ग्राम सेविका होंगी और कौन होगा! मैं आता हूं अभी।

(राधे चला जाता है।)

सुक्खू : उनके जरा खाने-पीने का भी पूछ लेना बेटा।

साधूजी : चिलम नहीं चढ़ेगी महतो।

मंगला : चिलम फूंकना हो तो बाहर जाके फूंको, समझे साधू महाराज! (सुक्खू से) तुमने चिलम को हाथ लगाया तो मैं देख लूंगी!

हरखू : (बाहर से) का हुआ भौजी, काहे को बिगड़ रही हो? तुम्हारी तो नाक पर गुस्सा धरा रहता है।

साधूजी : तमाखू भी न पीए? अरे पूछो भला! सिर्फ तमाखू पीएंगे।

हरखू : सुक्खू भइया सुना! एक सरकारी औरत गिराम सेवा करने के लिए आई हैं। राधे कहां है।

सुक्खू : उन्ही से मिलने गया है। सायद कुछ लछिमी की जुगत बन जाए।

हरखू : लछिमी की काहे फिकर करते हो भइया! उसके लिए हम लोग का कम हैं?

मंगला : कम तो कोई नही है पर कोई करे तो…

सुक्खू : लछिमी के भाग में जो होगा सो सब हो जाएगा मंगला…ईसुर ने मुसीबत डाली है तो वही पार भी लगाएगा…।

साधूजी : और का महतो! ऊपर वाले की बड़ी-बड़ी बांहें हैं। सब पार लगाएगा…

हरखू : हम जरा राधे से मिल आयें, इत्ते दिन बाद देखूगा…

(हरखू चला जाता है)

साधूजी : हम भी चलें महतो ! बम भोले बाबा की।

मंगला : हां हां, यहां अब चरस-गाजे का डौल नहीं है साधूजी…

साधूजी : अरे पूछो भला, अब जा ही रहा हूं तब काहे को पीछे पड़ी है। अपने राम कुछ मागने आए थे ? बम भोले…

(चला जाता है)

सुक्खू : तू हर आदमी से लड़ने को तैयार रहती है। दीन दुनिया में इस तरह काम नहीं चलता मंगला।

मंगला : हमारा काम तो इसी तरह चलता है, समझे। हर बख्त सीख मत दिया करो…

सुक्खू : लछिमी कहां है ? जरा बुलाओ।

मंगला : (उदास स्वर में) उसका यहां मन ही नहीं लगता, घर से भागी…भागी रहती है। सायद पड़ोस में गई है कहीं।

सुक्खू : (बहुत गहरी सास लेकर) मन कैसे लगे बिचारी का…

(राधे आता है)

राधे : दादा…

सुक्खू : हो आए बेटा ? कौन आयी हैं।

राधे : ग्रामसेविका हैं। मैं उनसे बात कर आया हूं। सरकार ने तमाम गांवों में ग्रामसेविकाओं को भेजा है। बड़े पते की बात बताती हैं…

सुक्खू : (उत्सुकता से) लछिमी के लिए कुछ बात किया ?

राधे : लछिमी के लिए ही तो गया था। ग्रामसेविका जी यहां एक दस्तकारी का स्कूल खोलना चाहती हैं…

मंगला : यहां ऐसा कौन है जो दस्तकारी जानता है।

राधे : वो खुद सिखायेंगी। उनका तो काम ही यही है। औरतों को सलीका सिखायेंगी, घर गृहस्थी के काम बतायेंगी।

मंगला : घर गिरस्ती का वो का सिखायेंगी !

सुक्खू : लछिमी के लिए का बात हुई राधे ?

राधे : बात हमसे कर ली है। ग्रामसेविका जी कह रही थी कि चार-पांच लड़कियां होते ही वो सिखाना शुरू कर देंगी।

मंगला : का सिखाएंगी ?

राधे : यही छोटे-मोटे काम, जिनसे बेकार बखत भी काम में लग जाए और कुछ पैसा भी मिलने लगे। सिलाई का काम, डलियां-चौरी बनाने का काम···

सुक्खू : यह तो बड़ी अच्छी बात है राधे···

राधे : लछिमी को मैं अभी मिलवा देता हूं उनसे, जितनी, जल्दी स्कूल शुरू हो जाय अच्छा है

सुक्खू : हम भी जरा उनसे मिल लें। तू साथ चल जरा।···

राधे : चलो दादा।

मंगला : अरे खा पी के ठीक से जाना···

सुक्खू : तू खाना रख, सायद वो हमारे घर ही खाने आ जायं ···अभी आए हम लोग···लछिमी को बुला ले जरा···

(चले जाते हैं)

(क्षणिक अन्तराल)

नैरेटर : गांव में नया जीवन आया। चौपाल ओसारे और घर के आंगन चमचम चमकने लगे। लेकिन हर अच्छी बात आसानी से पूरा नहीं हो जाती। ग्रामसेविका का कुछ ने स्वागत किया तो कुछ ने तिरस्कार। पर चार ही महीने में छोटा-सा स्कूल खूब चलने लगा। औरतों ने जैसे एक नई दिशा देखी···लछिमी रोज स्कूल जाती है और नई दस्तकारियां सीख कर आती···

(चार पांच आदमियों की सुनसुनाहट)

साधूजी : बम भोले···सब बरबाद करने पर जुटे हैं। अरे पूछो भला, किसानो के घर की बेटियां दर्जीगीरी करेंगी।

सुक्खू : तो क्या हुआ साधूजी। ई फतोई देख रहे हो। लछिमी ने सी है। अपनी सब सिलाई वो खुद करने लगी है।

राधे : अरे कुछ दिनों में मेरा कोट सिलेगी लछिमी दादा।

सुक्खू : और का राधे बेटा।

साधूजी : अरे ई सब अंगरेजी काम ने ही देस को बिगाडा है। अभी तक मुसलमान दर्जी होते थे अब हमारे घर की बिटिया ये सब करने···

राधे : (बात काटकर) इसमें हिन्दू मुसलमान का कोई सवाल नही है साधूजी। दस्तकारी सबके लिए होती है। कोई काम बुरा नही है।

साधूजी : तुम्हारी गीराम सेविका के तम्बू तो हम उखड़वाएंगे। मार भिरिष्टाचार मचा रखा है। जो बहुएं देहरी से बाहर पैर नहीं रखती थी अब झम्म-झम्म करती सामने से निकल जाती हैं! अरे देख भला, ई अनरथ अब देखा जाएगा इन आंखों···हिंदू धरम का सरवनाश हो रहा है!

हरखू : तुम्हारे लिए तो सब सरवनाश है बाबाजी। तुम तियागी सन्यासी आदमी। जाके दम लगाओ···

साधूजी : वाह रे हरखू वाह! तू भी रंग गया।

हरखू : रंग चढ़ने की का बात है बाबाजी। ई सब अच्छा हो रहा है। हमारी बिटियां अब किसी की मोहताज नही रह जाएंगी···इस महीने तीस रुपये की चीजें बिकी हैं।

सुक्खू : कौन-सी चीजें?

राधे : वही जो लड़कियों ने स्कूल में बनाई हैं।

सुक्खू : अच्छा!

साधूजी : ई सब अनरथ तुमने करवाया है राधे। परमात्मा तुम्हें··

राधे : (बात काटकर) रहने दो साधूजी, तुम अपना काम देखो। हर जगह नाक मत घुसेड़ा करो···

सुक्खू : हमें तो लछिमी की खुशी चाहिए भइया।

साधूजी : अरे देखना···उधर अहीर टोले की एक लड़की नहीं आएगी अब स्कूल में। हमने चला दिया है···अपना मंतर ! बम भोले···अब देखना···

राधे : सब देख लिया है साधूजी। अम्मा···(पुकारता है)

मंगला : का है राधे ?

सुक्खू : अरी मंगला सुन। एक बात बता, तू तो लछिमी के स्कूल गई थी, उसका जी तो लगता है न ?

मंगला : (प्रसन्नता से) अरे जी की बात पूछते हो। लछिमी तो बड़ी खुस है। उसे काम से फुर्सत ही नहीं मिलती··· ···छोटी मास्टरनी हो गई है···

सुक्खू : (बहुत संतोष से) यही चाहिए था। लछिमी की खुसी लौट आई बस वह सुख से रहे···

राधे : और सब भी खुश हो जाएंगी दादा···

सुक्खू : वो दिन आए बेटा···वो दिन आए। लछिमी खुस रहे···गांव की बहू-बेटियां खुस रहें···तो दिन आ ही गया राधे, शायद···आ ही गया वह दिन···

साधूजी : करो अधरम···परमात्मा तुम्हें शाप देगा···करो अधरम···परमात्मा शाप देगा !

सुक्खू : परमात्मा हमें आशीष देगा साधूजी···आशीष !

(तेज संगीत उभरता है···)

(फेड आउट)

अवधि : 15 मिनट

झलकियां

हंसना मना है

बड़े कार्यक्रमों के बीच में कभी-कभी एक फुलझड़ी के रूप में मनोरंजन देने तथा कोई बात कहनेवाला यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण रेडियो कलारूप है। कभी-कभी तो इन्हें वहीं स्टूडियो में लिखना पड़ता है और अपने साथ काम कर रहे साथियों की आवाजों से ही तात्कालिक काम चलाना पड़ता है—इसलिए झलकियों की मौलिकता कभी-कभी खण्डित हो जाती है, पर उनकी महत्ता नहीं। दो गंभीर कार्यक्रमों के बीच में राहत देने के लिए या किसी कार्यक्रम की अवधि में कम पड़ जाने की स्थिति में यह झलकियां ही हैं—जो रेडियो के अनवरत प्रसारण को जीवित रखती हैं। देखना सिर्फ यह पड़ता है कि ये किसी महत्वपूर्ण या बड़े या गंभीर कार्यक्रम की प्रभाव क्षमता को गुमराह न करें!

यह भी एक तात्कालिक कला रूप है।

पहली झलकी : घर में

(कार रुकने की आवाज़, एक क्षण बाद ही डाक्टर के पगों का संकेत)

डाक्टर : (इलैक्ट्रिक बेल बजाकर) कोई सुनता ही नहीं। शायद इलैक्ट्रिक बेल खराब हो! आखिर पचानन जी की है (एक क्षण इन्तज़ार करके) पंचानन जी···पत्रकार जी···

पंचानन : (दौड़कर आने का संकेत, एकदम दरवाज़ा खुलने का स्वर) ओ हो डाक्टर साहब! आइए···आइए···

डा० : ये आपकी बेल खराब है शायद!

पं० : शायद नहीं, शत-प्रतिशत!

डा० : फिर इसका क्या फायदा? मेरा मतलब है कि···

पं० : बाइ दा वे, इसका फायदा दो तरफा है डाक्टर साहब! पत्रकार आदमी हूं मैं! पहले जब यह इलैक्ट्रिक बेल नहीं थी तो रात-बिरात लोगों के पुकारने से पड़ोसियों की नींद हराम होती थी···जब यह लग गई तो मेरी नींद हराम होने लगी और अब! अब यह लगी भी है पर कोई विघ्न-बाधा नहीं। बाइ दा वे···

डा० : (हंसते हुए) ओ हो, यह बात है···अच्छा यह तो बताओ कि मुझे किसलिए याद किया है भाई···

पं० : आओ, आओ…बाइ दा वे, भीतर आओ ! हां भई डाक्टर, एक बात के लिए तुमसे, बाइ दा वे, माफी मांग लूं। सचमुच मुझे बड़ा अफसोस है कि मैं उस दिन नहीं पहुंच पाया जबकि मुझे तुम्हारे यहां पहुंचना चाहिए था।

डा० : (बीच ही में) किस दिन, पंचानन ?

पं० : अब क्या बताऊं, पहले माफी दो भाई ! वैसे रोज तुमसे मिलता हूं पर उस दिन नही पहुंच पाया। भला किसी के घर मौतें रोज-रोज होती हैं ?

डा० : मैं समझा नही !

पं० : (अपनी ही बात कहते हुए) वाइ दा वे…सचमुच मुझे वेहद अफ़सोस है, पर क्या करूं मित्र !

डा० : (खीझते हुए) किस दिन भाई ?

पं० : उसी दिन, आज से कोई तीन महीना पहले। अब याद नहीं आता, मैं बहुत जल्दी में कोई समाचार लेने जा रहा था तभी किसी ने बताया कि तुम्हारे बहनोई ब्रिगेडियर साहब की मौत हो गई। आसाम मे किसी की गोली लगने से उनकी मौत हुई शायद…

डा० : ओ…हो ! जो होना था हो गया, पंचानन भाई ! उसके लिए अब…

पं० : (बात काटते हुए अपनी रौ में) नहीं, नही, मित्र ! गलती तो मुझसे हुई ही है। और लोगों के घरों की तो कोई बात नहीं, रोज इस तरह के मौके आते रहते हैं पर डाक्टरो के घरों मे तो कहीं पांच-सात साल बाद… मेरा मतलब है मित्र, बाइ दा वे, हंसी-खुशी मे तो सब सबका साथ देते हैं पर दुख पड़ने पर जो साथ खड़ा हो, वही मित्र है ! और मैं भूल कर गया…

डा० : तुम भी बड़े अजीब आदमी हो…पंचानन

पं० : (बात काटते हुए जैसे सचमुच बड़े चिन्तातुर हों) बाइ

दा वे···सचमुच बड़ी खतरनाक मौत हुई···एकदम गोली की मौत ! कुछ कह भी नहीं पाए होंगे बेचारे !

डा० : (और भी खीझकर) यार तुम भी पंचानन, क्या बात करते हो। वहां उनके पास कोई बैठा था भला। गोली लगी और वो बेचारे···

पं० : हां, हां···यह तो ठीक ही है। बाइ दा वे···उनके गोली कहां लगी थी।

डा० : आंख के नीचे।

पं० : (एकदम चौंकते हुए) ओफ ओ ! आंख के नीचे ! चलो ग़नीमत हुई कि आंख बच गई···नहीं तो गोली का क्या ठिकाना ! आंख पर ही लग जाती···बाइ दा वे, या किसी और चीज़ में लग जाती।

डा० : (कुछ बिगड़ते हुए) किसी और चीज़ में लग जाती तो फिर यह दुख ही काहे को होता।

पं० : (संवेदना प्रकट करने के स्वर में) यह भी ठीक है··· (नौकर को आवाज़ देते हुए) राधू ! दो कप चाय लाना जल्दी से···

नौकर : चाय तैयार है साहब ! अभी लाया।

पं० : तब सचमुच दुख काहे को होता ! इधर तुम्हारी तन्दुरुस्ती भी कुछ खराब नजर आ रही है। बात दर-असल में यह है मित्र ! कि दुख से शरीर टूट जाता है, तुम्हारे ऊपर भी वही असर है···वरना डाक्टर हो के···

डा० : (बात काटते हुए) नहीं, नहीं ! यह बात नहीं है पंचानन भाई! मैं खुद पिछले हफ्ते बुखार मे पड़ा था। फ्लू ने पकड लिया था। उसका कोई इलाज हम डाक्टरों के पास भी नहीं है।

(मेज पर प्याले रखने की आवाज़)

पं० : अब तो ठीक हो एकदम ! (चिन्ता प्रकट करते हैं) लो,

चाय पियो !

डा० : हां बुखार तो टूट गया पर कमर का दर्द नही जा रहा। उसी की वजह से परेशान हूं।

पं० : परेशानी की बात ही है भाई, डाक्टर बीमार पड़ जाय इससे बड़ी परेशानी और भला क्या होगी ? खैर चलो ! बाइ दा वे, बुखार टूट गया है तो कमर भी टूट ही जाएगी···और फिर तुम तो डाक्टर हो···

डा० : (फिर झुंझलाते हुए) भई तुम अजीब अहमक हो···

पं० : नमक (हसते हुए) तुम डाक्टरों के क्या कहने, चाय में नमक चाहिए !

डा० : (खिसियाकर हंसते हुए) अच्छा, वह सब तो हुआ··· पर मुझे तुमने बुलाया···

पं० : यार वड़ी जल्दी मचाते हो तुम ! इत्मीनान से काम करने की आदत तभी से उठ गई है। जब से डाक्टरों की कौम पैदा हुई है। हर वक्त जल्दी···यह भी कोई जिन्दगी है भला ! जब देखो तब हवा पर सवार हो ! मुझे पता है काम से निकले होगे, पर यह भी कोई बात हुई भला···बाइ दा वे···

डा० : (बे तरह खीझकर) मैं अपने काम से नहीं, तुम्हारे ही काम से आया हूं। अभी फोन तुम्ही ने किया था न···

पं० : (एकदम घबराकर) गजब हो गया डाक्टर ! (हड़बड़ाकर प्याला पटकते हुए) ओह···मैं भूल ही गया···हां फोन मैंने किया था···वो··· वो मेरी पत्नी को फिट आ गया था, उसी के लिए तो बुलाया था तुम्हें···बाइ दा वे···वह वेहोश पड़ी है···ओफ़ हो गजब हो गया···

(फेड आउट)

दूसरी झलकी : नौकरी की खोज में

[घर का वातावरण, कुछ बर्तन खटकने का स्वर, पंचानन की पत्नी मालती खाना बना रही हैं]

मालती : अरे सुनते हो…

पं० : क्या बात है मालती ? जरा अखबार पढ़ रहा हूं।

मा० : इस बार अपने मुन्ना को बड़े अच्छे नम्बर मिले हैं इम्तहान में।

पं० : (खुशी से) हां, (कुछ आत्म प्रशंसा के लहजे में) बुद्धि तो मेरी मिली है। अगर कहीं तुम्हारी मिलती तो बंटाढार हो जाता।

मा० : (बात काटकर) उसकी छोडो…कुछ घर की सोचो… कहीं नौकरी वग़ैरा खोजो, भला ऐसे बैठे अखबार पढ़ते रहोगे तो कितने दिन चलेगा।

पं० : अरे मालती (हंसकर) तुम भी नौकरी की बात करती हो ! इतनी छोटी-सी बात ! नौकरी ही करना चाहूं तो आज ही दस-बीस…

मा० : यह तो तुम हमेशा ही कहते रहे हो पर…

पं० : हें ! इसमें क्या रखा है ? पंचानन पत्रकार जी के लिए लोग मुंह फाड़े बैठे हैं। आज ही लो ! इसी अखबार में विज्ञापन है कि एक सहायक संपादक चाहिए…

मा० : (विनय से) तो चले जाओ न···सचमुच ऐसे कितने दिन चलेगा।

पं० : चला जाऊंगा···मालती···चला जाऊंगा !

(क्षणिक अन्तराल)

(किसी कमरे का दरवाज़ा खोलकर हड़बड़ाकर घुसने का संकेत)

मैनेजर : (गुस्से से) कौन हैं आप···कैसे घुस आए ?

पं० : (घबराहट में) जी, बाइ दा वे, मैं पंचानन पत्रकार··· मैं···(हकलाते हैं)

मैं० : कमरे के बाहर लगी तख्ती पढ़ी थी आपने ?

पं० : जी, जी हां···बाइ दा वे, मैं मैनेजर साहब से मिलना चाहता था।

मैं० : बाइ दा वे मिलना हो तो कहीं और मिलिए। मैनेजर से किसी काम से मिलना हो तो कायदे से आइए···

पं० : बाइ दा वे···बेकायदा काम तो कोई नहीं···

मैं० : (बिगड़ते हुए) उस बाहर लगी तख्ती पर क्या लिखा था ? पढ़ा था···

पं० : जी, बाइ दा वे, उस पर प्राइवेट लिखा था···

मैं० : तब आप कैसे घुस आए···

(पीछे प्रेस मशीनों का शोर होता रहता है)

पं० : जी आपका प्रेस जो है न सो···उसमें हर जगह चौकीदार तैनात हैं···पर आपके कमरे पर बाइ दा वे प्राइवेट का बोर्ड है···

मैं० : बाइ दा वे प्राइवेट का बोर्ड लगा है वह कुछ मतलब रखता है।

पं० : जी, मतलब रखता है मैनेजर साहब ! आजकल की

दुनिया में बाइ दा वे व्यावहारिक ज्ञान और लिखित ज्ञान में बहुत अन्तर पड़ गया है। उल्टी बात जरा जल्दी समझ मे आती है। हे···हें·· बाइ दा वे कही पर कोई बोर्ड लगा है नो पार्किंग ! शायद आप अंग्रेज़ी न समझें ···बाइ दा वे इसका मतलब है कार खड़ी करना मना है। पर साहब ! वहीं सारी कारें खड़ी की जाती हैं। जिस दीवार पर लिखा होता है इश्तहार लगाना मना है···उसी पर खूब इश्तहार लगाए जाते हैं।

मैं० : तो···आपका मतलब ?

पं० : जी ई···मतलब यह कि जो काम करवाना हो। उसका उल्टा लिखिए आपके कमरे पर प्राइवेट लिखा था। इसीलिए मैं इसे सार्वजनिक समझा ! जी···हें···हे··· बाइ दा वे ?

मैं० : पर आपको किसी से पूछकर आना चाहिए था !

पं० : पूछा था साहब ! एक बाबू ने बताया कि सीधे चले जाइए। एक बड़ा-सा हाल मिलेगा, उसमें घुसने पर दायी ओर एक रास्ता मिलेगा, उस पर लिखा होगा··· 'अन्दर जाना मना है।' उसी में चले जाइयेगा। आगे जाकर सामने एक गैलरी मिलेगी, वहां लिखा होगा··· 'यहीं रुकिए। उसमें चलते चले जाइएगा। गैलरी पार करके एक फाटक मिलेगा। उस पर आपकी नेम प्लेट होगी। अगर उस पर 'आउट' खुला हुआ तो समझिएगा कि मैनेजर साहब भीतर हैं। और भीतर पहुंच कर बाईं ओर कमरे पर लिखा होगा···'प्राइवेट !' बस उसी मे बेखटके घुस जाइयेगा। जी···तो मैं ऐसे चला आया। बाइ दा वे···

मैं० : वाह साहब वाह (मज़ा लेते हुए) [illegible] आप ! अब आ ही गए हैं तो कोई बात नहीं [illegible] . था [illegible] दा वे···

पं० : जी बाइ दा वे···अखबार में आपने विज्ञापन दिया है कि आपको सहायक संपादक चाहिए···

मैं० : जी हां, दिया तो है···पर आप···

पं० : (बात काटकर) जी हां, इसीलिए आया हूं। बाइ दा वे मैं पत्रकार हूं···पर मैनेजर साहब आपने मुझे पहचाना नहीं इस बात का मुझे खेद है।

मैं० : माफ कीजिएगा ! कुछ याद नहीं पड़ता ! शायद कहीं देखा हो !

पं० : मैं याद दिलवाता हूं। ज़रा याद कीजिए आप ! पिछली सूर जयंती पर आप···बाइ दा वे कालिज हाल में भाषण दे रहे थे ना···याद आता है···

मैं० : जी हां···जी हां।

पं० : अब ज़रा वह मौका याद कीजिए। जी···तब आप बोल रहे थे और एक मौके पर सिर्फ मैंने ही ताली बजाई थी। (प्रसन्न होते हुए) सब लोग पीछे मुड़ कर मेरी ओर देखने लगे थे। आपने तो बड़े गौर से देखा था···और तब आपने खुद मेरे लिए ही कहा था कि जब सभा में ऐसे बुद्धिमान उपस्थित हैं तब भाषण देने की क्या ज़रूरत है···हें ··हें···मैं वही बुद्धिमान पत्रकार हूं···

मैं० : तो वो आप थे। खूब आए आप···चपरासी···चपरासी (चपरासी को पुकारते हैं)

चपरासी : जी हुज़ूर···

मैं० : इन्हें बाहर निकाल दो।

पं० : ऐं···बाइ दा वे···सुनिए तो···

(फेड आउट)

तीसरी झलकी : परदेस में

(रेलवे प्लेटफार्म का आभास)

कुली : चलिए बाबू जी, हम बाहर तक पहुंचा देते हैं ! उठाऊं सामान !

पं० : नही ''नही कुली हमे नही चहिए'''सुनो मालती, इधर खड़ी रहो'''

मा० : खड़े होकर क्या करेंगे, बाहर चलो न।

कु० : चलिए बाबूजी, बोला न'''बाहर तक पहुंचा दूगा।

पं० : (बिगड़कर) मुझे शहर के अन्दर जाना है, बीच चौक मे !

कु० : स्टेशन के बाहर तक बाबू जी चार आने में'''

पं० : सामान ही कितना है'''मैं, मेरी बीबी और एक सूटकेश'''बाइ दा वे'''बहुत ज्यादा मांगते हो ! चार आने'''

कु० : चार आने रेट है बाबू जी !

पं० : (बिगड़कर) ऐसे ही चार-चार आने देता रहता तो अब तक मैं खुद ही कुली हो गया होता।

मा० : तुम भी किन बातों मे उलझ गए'''चलो न उठवा लो सूटकेस।

पं० : ठीक है ठीक है चलो कुली'''चलो मालती'''

(शोर पीछे छूटता है बाहर अड्डे पर तांगे वालों का शोर है)

तांगेवाला एक : हुजूर, चौक चलिएगा ?

दो : हुजूर, इधर ! इस तांगे पर आ जाइए…

तीन : बाबूजी…इस तांगे पर आइए…चार-चार आने में दोनों सवारी…

पं० : (एकदम बिगड़कर) बड़े बदमाश हो तुम लोग। पीछा नहीं छोड़ते। देखती हो मालती ! घर से चले तो यह लोग पीछे लग गए…बाबूजी, स्टेशन, स्टेशन…यहां उतरे तो पीछे लग गए, बाबूजी चौक…चौक… (तांगे-वालों से) मैंने वहीं कह दिया था, नहीं चाहिए तांगा-वागा, बाइ दा वे…

(एक आदमी आता है)

होटल गाइड : साब, होटल में जाएगा ? बढ़िया नीट क्लीन कमरा… हवादार…

पं० : (मालती से) क्यों मालती होटल में ही सही। क्या खयाल है ?

मा० : (जो बिगड़ी हुई हैं) मैं नहीं जानती, जो तुम ठीक समझो !

पं० : ओए, सुनो भाई ! तुम तांगा करके ले चलोगे !

हो० गा० : जरूर…आइए…मेम साहब…आइए साब !

पं० : आओ मालती, देखो सस्ता सौदा रहा।

मा० : तुम मुसीबत में फंसवाओगे !

पं० : (हंसते हुए) बाइ दा वे, तुम तो नाराज हो जाती हो… आओ तांगा तैयार है।

(तांगा जाने का संकेत, क्षणिक अन्तराल)

पं० : बैरा···बैरा !

बैरा : जी साब !

पं० : देखो, हम लोग ज़रा घूमने जा रहे हैं··· (भीतर मालती से) अरे भई मालती, निकलो भी·· तो हां बैरा बाइ दा वे, कोई अगर हम्हे पूछने आए तो उसका नाम नोट कर लेना।

बैरा : क्या पूछता हुआ आएगा साब !

पं० : यही कि कोई साहब लम्बे-लम्बे सुन्दर से···अपटूडेट··· पैजामा और कमीज़ पहने अपनी पत्नी के साथ तो नहीं टिके हैं यहा···यानी मेरा खाका बताएंगे उनका नाम नोट कर लेना। कोई मेरा नाम ले तो वह भी।

बैरा : आप का क्या नाम लेंगे साब, अपना नाम तो बता दें।

पं० : बड़े बुद्धू आदमी हो ! तुम्हारे यहां रजिस्टर में दर्ज है मेरा नाम। बाइ दा वे बताए देता हूं···मेरा नाम है पंचानन पत्रकार ! (मालती से) अरे निकलो भी भई, मालती···मालती।

मा० : आ तो गई।

पं० : बैरा ! ज़रा मेरे कमरे का नम्बर पढ़ कर बताना।

बैरा : बारह नम्बर है साहब।

पं० : बारह ! कमरा नम्बर बारह···साल में बारह महीने··· (याद करते हुए रटते हुए) मेरी शादी का बारहवी साल। आओ मालती चलें। बारह (याद करते हुए मालती के साथ चले जाते हैं) बारह···

(नीचे जाने का संकेत···क्षणिक अन्तराल··· दरवाजा खटखटाने की ध्वनि)

पं० : खोलिए 'साहब···कौन साहब भीतर हैं ··खोलिए दरवाजा···

व्यक्ति : (दरवाज़ा खोलकर) ?

पं० : काम ! वाह दा वे, आप मजाक कर रहे हैं··· (मालती से) आओ मालती खड़ी क्यों हो ? कमरे में आओ··· बड़ी गर्मी है··

मा० : (हिचकते हुए) सुनिए, तो इधर तो आइए···

व्य० : आखिर आप कमरे में क्यों घुसे आ रहे हैं ? कुछ बताइए भी···कहां से आए हैं, किससे मिलना चाहते हैं ?

पं० : मिलना किससे है। यह कमरा मेरा है साहब !

व्य० : (आश्चर्य से) यह कमरा आपका है···अजी यह कमरा मेरा है साहब। मैं इसमें तीन दिन से टिका हूं।

पं० : (बिगड़ते हुए) बारह नम्बर है न ?

व्य० : है तो, इससे क्या हुआ ?

मा० : (पचानन से) जरा आप सुनिए तो मेरी बात।

पं० : (मालती को डांटते हुए) तुम हमेशा बीच में टांग मत अड़ाया करो। मुझे जरा इनसे निपट लेने दो। मेरे कमरे मे जमे बैठे हैं··· (व्यक्ति से) आप बाहर आइए साब। (चीख कर) हमें भीतर आने दीजिए···रास्ता छोड़िए।

व्य० : क्या बात करते हैं आप ! (चीखता है) वाह साहब, वाह। खूब रही (आदमियों के बढने का शोर होता है और बढता जाता है)

कई आवाजें : क्या बात है भाई, यह झगड़ा क्या है ? आप बिगड़ क्यो रहे हैं···

पं० : (बेहद बिगड़ते हुए) बिगडने की बात है। आप लोग खुद देखिए यह कमरा नम्बर बारह है ! मेरे कमरे का नम्बर बारह है। हम परदेसी हैं तो इसका मतलब है कि इस तरह हमें परेशान किया जाएगा ? वाह दा वे (मालती से) तुम उधर क्यों खड़ी हो मालती ? इधर आओ।

मा० : (खीझकर) पहले आप एक मिनट इधर आइए। मेरी

सुनिए तो···

एक स्वर : अरे मैनेजर साहब झगड़ा निबटाइए···देखिए क्या बात···

(शोर निरन्तर होता है)

मैं० : हां साहब, क्या बात है ? मुझे बताइए !

पं० : बात यह है कि बाइ दा वे, मेरा नाम पंचानन पत्रकार है आपके रजिस्टर में दर्ज है···कमरा नम्बर बारह मेरा है पर यह महाशय···

मैं० : लेकिन आप तो मेरे होटल में नहीं ठहरे हैं।

पं० : (एकदम घबरा और खिसियाकर घबराते हुए) मैं आपके होटल में नहीं ठहरा हूं · बाइ दा वे, होटल (मालती से चीखकर) गजब हो गया मालती ! हम गलत होटल में आ गए ! तुमसे होटल का नाम भी याद नहीं रखा गया ? तुम पर जो काम छोड़ता हूं सब बाई दा वे, चौपट हो जाता है।

मा० : मेरी सुनते भी तो नहीं हैं आप···कब से कह रही हूं सुनिए···सुनिए···

पं० : सुनूं क्या ! यह तो गजब हो गया कमरा नम्बर तो याद है···पर होटल कौन सा था···

(सबकी हंसी)

(फेड आउट)

अवधि : प्रत्येक झलकी 5 मिनट -

मुद्रक : हरिकृष्ण प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-110032 5822